www.thearyasamaj.org

जिसने बदली दिशा जगत् की,
धरती और आकाश की ।
जय बोलो ऋषि दयानन्द की,
जय सत्यार्थ प्रकाश की ।।

।। ओ३म् ।।

वर्ष - ५४ अंक - १
मूल्य : एक प्रति १० रुपये
वार्षिक : १००) रु०
आजीवन - १०००) रु०
प्रतिमास ता० १३ को प्रकाशित

आर्य-संसार

पौष : सम्वत् २०६९ वि०

जानवरी २०१३

आर्य समाज कलकत्ता , १९ विधान सरणी का भवन

www.thearyasamaj.org

आर्य समाज कलकत्ता की गतिविधियाँ

आर्य समाज कलकत्ता का १२७ वाँ वार्षिकोत्सव :

१. आर्य समाज कलकत्ता का १२७ वाँ वार्षिकोत्सव शनिवार २२ दिसम्बर से रविवार ३० दिसम्बर २०१२ तक आमहर्स्ट स्ट्रीट स्थित हृषीकेश पार्क में हर्षोल्लास पूर्वक मनाया गया । स्थानीय विद्वानों के अतिरिक्त प्रो० राजेन्द्र जिज्ञासु (अबोहर), डा० सुरेन्द्र कुमार (गुड़गाँव), डा० राजेन्द्र विद्यालंकार (कुरुक्षेत्र), डा० ऋचा योगमयी (खगड़िया), श्री वासुदेव शास्त्री (जयपुर), एवं भजनोपदेशक श्री दिनेश दत्त आर्य (दिल्ली) आदि विद्वानों ने अपनी उपस्थिति से समारोह को गरिमा प्रदान की ।

ऋग्वेद पारायण यज्ञ :

२२ दिसम्बर २०१२ को प्रातः ७.३० बजे से डा० सुरेन्द्र कुमार जी (गुड़गाँव) के ब्रह्मत्व में ऋग्वेद पारायण यज्ञ प्रारम्भ हुआ मुख्य यजमान आर्य समाज कलकत्ता के प्रधान श्री मनीराम आर्य, मन्त्री श्री सत्यप्रकाश जायसवाल एवं कोषाध्यक्ष श्री मदनलाल सेठ जी ने संकल्प पूर्वक यज्ञ के ब्रह्मा एवं ऋत्विजों को पारायण यज्ञ हेतु वरण किया । ऋत्विजगण के रूप में वेद पाठ कर रहे थे—पं० आत्मानन्द शास्त्री, पं० नचिकेता भट्टाचार्य, पं० देवनारायण तिवारी, पं कृष्ण देव मिश्र, पं० योगेश राज उपाध्याय, पं० अर्चना शास्त्री ।

ध्वजोत्तोलन :– प्रातः यज्ञ के उपरान्त 'ओ३म्' ध्वजोत्तोलन डा० सुरेन्द्र कुमार जी के कर कमलों द्वारा हुआ । ध्वजगीत आर्य कन्या महाविद्यालय की छात्राओं द्वारा प्रस्तुत किया गया । ध्वजोत्तोलन के साथ रघुमल आर्य विद्यालय के छात्रों एवँ आर्य कन्या महाविद्यालयों की छात्राओं द्वारा बैण्ड ध्वनि प्रस्तुत की गयी ।

शोभायात्रा :—अपराह्न २ बजे से आर्य समाज कलकत्ता, १९ विधान सरणी से एक विशाल एवँ सुसज्जित शोभा-यात्रा विवेकानन्द रोड, गणेश टाकीज, कलाकार स्ट्रीट, महात्मा गांधी रोड, कालेज स्ट्रीट, विधान सरणी, बेचू चटर्जी स्ट्रीट होते हुए समारोह स्थल हृषीकेश पार्क में सायं ५ बजे पहुँच कर समाप्त हुयी । शोभा यात्रा में आर्य समाज कलकत्ता, आर्य स्त्री समाज कलकत्ता, आर्य युवा शाखा, आर्य समाज विद्या सागर, आर्य समाज मल्लिक बाजार, आर्य समाज हावड़ा, आर्य समाज गारुलिया इत्यादि समाजों के अतिरिक्त, आर्य कन्या महाविद्यालय (प्राथमिक एवं माध्यमिक विभाग), रघुमल आर्य विद्यालय (प्राथमिक एवं माध्यमिक विभाग) के छात्र, छात्राओं एवं अध्यापक, अध्यापिकाओं ने भाग लिया ।

शोभायात्रा का कलाकार स्ट्रीट में विश्व हिन्दू परिषद द्वारा माल्यार्पण द्वारा स्वागत किया गया जिसमें श्री शीतल प्रसाद जी आर्य के परिवार का विशेष सहयोग था । आर्य समाज बड़ाबाजार द्वारा सत्यानारायण पार्क के निकट शोभा यात्रा का स्वागत एवँ फल वितरण किया गया ।

(शेष पृष्ठ २७ पर)

www.thearyasamaj.org

ओ३म्

आर्य-संसार

वर्ष ५४ अंक — १

पौष-२०६९ वि०
दयानन्दाब्द १८८
सृष्टि सं० १,९६,०८,५३,११३

जनवरी— २०१३

मूल्य : एक प्रति १० रुपये
वार्षिक : १०० रुपये
आजीवन : १००० रुपये

सम्पादक :
प्रो० उमाकान्त उपाध्याय,
एम. ए.

सह सम्पादक :
श्री राजेन्द्र प्रसाद जायसवाल
सहयोगी संपादक :
श्रीमती सरोजिनी शुक्ला
श्री सत्य प्रकाश जायसवाल
पं० योगेश राज उपाध्याय

इस अंक की प्रस्तुति

१.	आर्य समाज की गतिविधियाँ		२
२.	इस अंक की प्रस्तुति		३
३.	स्तुति विषय—साधना सोपान		४
४.	महर्षि वचन सुधा-१७	-प्रो० उमाकान्त उपाध्याय	७
५.	भष्टाचार मिटाने का सुझाव	-प्रो० उमाकान्त उपाध्याय	९
६.	सत्य सनातन वैदिक धर्म : आज की आवश्यकता	-श्री राम निवास गुणग्राहक	१२
७.	सत्य सनातन एवं सत्य नीति पर आधारित अन्तराष्ट्रीय सत्र की मूल्यपरक विद्यालय पाठ्यक्रम कक्षा १ से १२ तक का बन	-श्री ब्रह्म प्रकाश लाहोटी	१७
८.	महर्षि के जीवन की कुछ उपयोगी बातें	-श्री खुशहाल चन्द्र आर्य	२०
९.	आयु और मृत्यु विज्ञान	-श्री हरिश्चन्द्र वर्मा 'वैदिक'	१८

आर्य समाज कलकत्ता
१९, विधान सरणी, कोलकाता-७०० ००६, दूरभाष : २२४१-३४३९
email : aryasamajkolkata@gmail.com

'आर्य संसार' में प्रकाशित लेखों का उत्तरदायित्व सम्बन्धित लेखकों पर है।
किसी भी विवाद की स्थिति में न्याय क्षेत्र कोलकाता ही होगा।

www.thearyasamaj.org

१

साधना-सोपान

स्तुति विषय

पञ्च पदानि रूपो अन्वरोहं चतुष्पदी मन्वेमि व्रतेन ।
अक्षरेण प्रतिमिम एतामृतस्य नाभावधि सं पुनामि ।। ऋग्वेद १०-१३

पदार्थ

पञ्च	पाँच	**अक्षरेण**	अक्षर द्वारा
पदानि	पद	**प्रतिमिमे**	थाह पा लिया, माप लिया
रूपः	सीढ़ी	**एताम्**	इस (चतुष्पदी) को
अन्वरोहम्	क्रमशः आरोहण कर गया हूँ ।	**ऋतस्य**	उचित सत्य का
चतुष्पदीम्	चार पदवाली को	**नाभौ**	नाभि, केन्द्र पर
व्रतेन	व्रत के द्वारा	**अधि**	आधार
अन्वेमि	प्राप्त करता हूँ	**सं पुनामि**	अच्छी तरह पवित्र करता हूँ ।

भावार्थ :-मैंने व्रत के सहारे (रूप, रस, गन्ध, स्पर्श, श्रवण) पाँच इन्द्रियों को पार कर लिया। इनके बन्धन से मुक्त हो गया हूँ । व्रत के द्वारा चतुष्पदी (ऋक्, यजु, साम, अथर्व अर्थात् ज्ञान, कर्म, उपासना, विज्ञान) वेद माता को क्रम-क्रम से प्राप्त करता जा रहा हूँ । अक्षर के सहारे उचित, सत्य की नाभि, केन्द्र पर चढ़कर जीवन को सम्यक् पवित्र करता हूँ ।

व्याख्यान विन्दु :

१. साधना का प्रथम सोपान-विषयाचार को जीतकर सदाचार, ऋताचार का पालन ।
२. चतुष्पदी वेद ज्ञान प्राप्त कर ऋत सत्य को अपनाना ।
३. आचार हीनन्न पुनन्ति वेदाः ।, ४.पवित्र सदाचारी जीवन अन्तिम चरण ।

व्याख्या

जीवन में उन्नति करना मानव-जन्म का विशेषाधिकार है । अन्य किसी प्राणी को, पशु, प्राणी, जलचर, नभश्चर, कोई भी हो, किसी को यह पता नहीं है कि जीवन में उत्थान या उन्नति क्या वस्तु है और कैसे की जाती है? मनुष्येतर प्राणियों को निसर्ग सिद्ध, प्रकृति से ही जो ज्ञान, कर्म, योग्यता, दक्षता मिली है, उसमें वे वृद्धि नहीं कर सकते । उन्हें करने की न समझ है न सुयोग, न उन्नति करना उनके जीवन का लक्ष्य है ।

www.thearyasamaj.org

जीवन में उत्थान मनुष्य का ही सौभाग्य है और परमेश्वर ने इसे ही यह सुयोग दिया है। प्रस्तुत मन्त्र में साधक मनुष्य कहता है कि मैंने व्रत के सहारे पाँच सीढ़ियाँ चढ़ ली हैं। ये पाँचों सीढ़ियां हमारी पाँचों इन्द्रियों के संयम हैं। रूप, रस, गन्ध, स्पर्श, श्रवण। ये यदि संयम में हों तो उत्थान की सभी सीढ़ियाँ हैं, और यदि इनमें असंयम हो तो ये पतन के गड्ढे, पतन की सीढ़ियाँ हैं। हम आँख से रूप देखते हैं, जिह्वा से रस ग्रहण करते हैं, नासिका से गन्ध सूंघते हैं, त्वचा से स्पर्श करते हैं, और कानों से सुनते हैं। हमने यदि संयम से इन सीढ़ियों पर चढ़ लिया तो उत्थान है और यदि इन पर संयम न कर पाये तो पतन भी अनिवार्य है। नीतिकार तो इस असंयम को पतन ही नहीं मृत्यु का भी बड़ा सुस्पष्ट कारण मानते हैं। कहा है—

''कुरंग, मातंग, पतंग, भृंग, मीना हता:पञ्चभिरेव पञ्च।

एक: प्रमादी स कथन्न हन्यते य: सेवते पञ्चभिरेव पञ्च ।।''

मृग, हाथी, पंतगे, भौंरे, मछलियां एक—एक इन्द्रिय की निर्बलता से मारे जाते हैं। मृग के शिकारी बीन बजाकर मृगों को बुला लेते हैं। फिर उनका शिकार करते हैं, हाथी की दुर्बलता स्पर्श है, पंतगे रूप पर मरते हैं, भौंरे गन्ध पर और मछलियां जिह्वा के रस पर मरती हैं। नीतिकार कहते हैं कि मनुष्य के तो ये पांचों ही निर्बलताएँ जुड़ी हुई हैं। फिर उसके विनाश में क्या आश्चर्य है ?

साधक यहां कहता है कि मैंने व्रत लिया, दृढ़ निश्चय किया और मैंने इन पाँच सीढ़ियों को चढ़ लिया। हमने काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार, इन विषयों पर अधिकार कर लिया है और इस विजय को ऊपर चढ़ने की पांच सीढ़ियाँ बना ली हैं। ये उत्थान की पाँच सीढ़ियाँ ज्ञान,कर्म, चिन्तन, भावना और चरित्र हैं। पतन की पांच सीढ़ियों को वश में करके उत्थान की पाँच सीढ़ियों पर चढ़ चुका हूँ।

साधक आगे कहता है कि इन पाँच सीढ़ियों पर चढ़कर अब मैं चतुष्पदी अर्थात चार चरणों पर व्रत करके धीरे-धीरे चढ़ता जा रहा हूँ। ये चार पद ऋक् =ज्ञान, यजु:=कर्म, साम=उपासना, अथर्व=विज्ञान, अर्थात् ज्ञान, कर्म, उपासना रूपी सीढ़ियों को चढ़ता चल रहा हूँ। सर्वप्रथम ज्ञान प्राप्त करना, बिना ज्ञान के संसार में कुछ होता ही नहीं। ज्ञान-हीन का कर्म निष्फल ही रहेगा, किन्तु कर्महीन ज्ञानी का ज्ञान भी व्यर्थ ही है। अत: हमें ऋक् की प्राप्ति के साथ यजु:, कर्म को भी प्राप्त करना है। कर्म तो नास्तिक भी करते हैं। चोर, डाकू भी कर्म करते ही हैं। किन्तु मैं अपने कर्म में प्रभु की उपासना का भी ध्यान रखता हूँ। साधक कहता है कि मैं ज्ञान और कर्म के साथ ही उस प्रभु को स्मरण करना, उसकी उपासना करना आवश्यक मानता हूँ। मैं उपासना में अपनी कृतज्ञता प्रकट करता हूँ और प्रभु से जीवन में उत्थान करने की प्रार्थना करता हूँ। यह सब बिना अथर्व, विज्ञान के प्राप्त नहीं होता। वेद माता अपनी गोद में बैठा कर हमको ये चारों चरण प्राप्त कराती जा रही हैं। मन्त्र में कहा है कि अक्षर के सहारे मैं उचित और अनुचित,ऋत और सत्य की नाभि पर आरूढ़ होकर अपने जीवन को सब प्रकार से पवित्र बनाता हूँ। अक्षर तो ज्ञान के अक्षर हैं ही, पर परम अक्षर प्रभु परमेश्वर हैं। साधक कहता हैं मैं उसी अक्षर ब्रह्म का सहारा लेकर, उसी की गोद में बैठ कर ऋत और सत्य की नाभि, ऋत और सत्य का केन्द्र प्राप्त कर सका हूँ। ऋत है—उचित, ऋत है संसार का शाश्वत नियम और ऋत की नाभि उचित आचरण का केन्द्र हैं। अपने जीवन में उचित-अनुचित का विचार कर सदाचारी, सद्विचारी रहना जीवन की पवित्रता है। जिसका आचार पवित्र है, उसका जीवन पवित्र है, जिसका

www.thearyasamaj.org

आचार पवित्र नहीं, उसका जीवन भी अपवित्र है । कहते हैं—

''आचार हीनन्न पुनन्ति वेदा: ।''

जो आचारहीन हैं, उन्हें तो वेद भी पवित्र नहीं कर सकते। अत: ऋषियों ने सिखाया है—

''आचार: प्रथमो धर्म: ।''

आचार, आचरण मनुष्य का प्रथम धर्म, कर्तव्य है । सारे संसार के विचारक इस निष्कर्ष में सहमत हैं कि चरित्र से मूल्यवान संसार में कुछ नहीं है । धन, जन, सम्पत्ति, प्रतिष्ठा,सब का मूल्य है । किन्तु चरित्र, जीवन में आचरण-व्यवहार सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण है । अंग्रेजी में भी एक उक्ति है—

If wealth is lost, nothing is lost;
If health is lost, something is lost;
If Character is lost, everything is lost.

अर्थात् यदि धन की हानि हो गयी, तो कोई चिन्ता नहीं, धन आज गया तो कल आ भी जायेगा। यदि मनुष्य का स्वास्थ्य गिर जाये, शरीर निर्बल हो जाये तो थोड़ी चिन्ता होती है, किन्तु रोग दूर हो जाते हैं, शरीर फिर से स्वस्थ हो जाता है। परन्तु, यदि मनुष्य का चरित्र नष्ट हो जाये तो अब उसके जीवन में बचा ही क्या है । दुराचारी, दुष्ट को संसार कोसता है । रावण बलवान् राजा था, उसकी धाक थी, उसकी नगरी लंका सोने की थी, किन्तु वह काम के वश में था । उसका कुल भी नष्ट हुआ और आज तक संसार उसे कोसता है । अत: इन्द्रियों पर संयम करके चरित्र को पवित्र बनाना हमारा कर्त्तव्य है ।

विषय वासना में फँस जाना पतन का मार्ग है । विषय वासना से छूटने का उपाय प्रभु भक्ति, प्रभु की शरण में जाना है -

'विषय भुजंगम जब डसै, नाम जड़ी को खाओ ।
नाग दमन यह औषधि, ढूँढ़न और न जाओ ।।'

विषय रूपी नाग जब काटे तो प्रभु के नाम का स्मरण करो। प्रभु की शरण में जाना नाग को दमन करने वाली औषधि है और कुछ ढूँढ़ने की आवश्यकता नहीं है ।

यह है साधना का सोपान, जिस पर चढ़ना मनुष्यमात्र का कर्तव्य है ।

प्रो० उमाकान्त उपाध्याय की नवीनकृति प्रकाशित
'मातृभूमि वैभवम् पृथिवी सूक्त विमर्श'
प्रकाशक : आर्य समाज कलकत्ता

www.thearyasamaj.org

''महर्षि वचनसुधा'' – १७

–प्रो० उमाकान्त उपाध्याय

''यह बात ठीक है कि राजाओं का राजा किसान आदि परिश्रम करने वाले हैं और राजा उनका रक्षक है।''
—सत्यार्थ प्रकाश षष्ठ समु०

मध्यकाल के इतिहास को सामान्य दृष्टि से देखने पर ऐसा लगता है कि मध्यकाल में कई हजार वर्षों से संसार में राजतंत्र का प्रचलन रहा है। राजा सर्वोपरि होता था। राजा के ऊपर किसी का नियन्त्रण या अंकुश नहीं होता था। राजा का वचन ही कानून होता था। मन्त्रिमण्डल होता था, लेकिन वह राजा की इच्छा के अनुकूल ही सलाह देता था। राजा में ही सम्पूर्ण अधिकार, सम्पूर्ण शक्ति निहित होती थीं। राजा ही प्रमुख कानून बनाने वाला, कानून की व्यवस्था करने वाला सर्वोच्च न्यायाधीश और सेना का सर्वप्रभुता सम्पन्न अधिकारी होता था। इस प्रकार विधिपालिका, न्यायपालिका तथा कार्यपालिका सबका सर्वश्रेष्ठ, सर्वप्रभुता सम्पन्न अधिकारी राजा ही होता था। कहीं-कहीं गण राज्यों का वर्णन भी है किन्तु वह गणाधिपति बहुत सीमित जनतन्त्र था। उस दृष्टि से सम्पूर्ण प्रजा को, राज्य की सम्पूर्ण जनता को मताधिकार नहीं था। इस दृष्टि से विचार करने पर यह लगता है कि स्वामी दयानन्द जी का ऊपर लिखित उद्धरण बहुत उदार है।

राजाओं के राजा किसान :– स्वामी दयानन्द के राजनीतिक विचार इतने उच्च और उदार हैं कि शुद्ध अंग्रेजी पढ़े-लिखे विद्वानों को आश्चर्य होता है कि केवल मात्र वेदशास्त्र और संस्कृत विद्या पढ़ा हुआ संन्यासी राजनीति की इतनी उदार व्याख्या कैसे कर सकता है। किन्तु स्वामी जी ने मनुस्मृति और वेदों के आधार पर ऐसी-ऐसी बातें लिखी हैं जो उस समय योरोप के भी उदार राजनीतिज्ञ नहीं बोल रहे थे। स्वामी जी ने किसान मजदूरों को राजाओं का भी राजा कहा है।

''यह बात ठीक है कि राजाओं का राजा किसान आदि परिश्रम करने वाले हैं और राजा उनका रक्षक है।'' पृ० २५६

कई लोग ऐसा समझते है कि स्वामी जी ने किसान श्रमजीवियों को जो स्थान दिया है उसके पीछे कार्ल मार्क्स के विचारों का प्रभाव है, किन्तु यह बात इतिहास से सिद्ध नहीं होती। एक तो कार्ल मार्क्स और स्वामी दयानन्द समकालीन हैं और दूसरे जिस समय स्वामी जी सत्यार्थ प्रकाश लिख रहे थे उस समय कार्ल मार्क्स की प्रसिद्ध पुस्तक 'दास कैपिटल' का अंग्रेजी अनुवाद भी नहीं हुआ था, हिन्दी अनुवाद की तो बात ही क्या है। दास कैपिटल का अंग्रेजी अनुवाद १८८७ में हुआ था। उस समय सन् १८८०–८३ के आस-पास मार्क्स की कोई सार्वजनिक चर्चा भी न थी। अतः किसान और श्रमजीवियों के प्रति जो भावना स्वामी दयानन्द की है वह उनकी अपनी है और वेद एवं स्मृति आदि भारतीय ग्रन्थों से अनुप्राणित है। **''इन्द्रोसि विशौजाः** (यजु० १०।२८) अर्थात् हे राजन्! तेरा बल प्रजा है।''

www.thearyasamaj.org

राजा प्रजा के सम्बन्ध में भी स्वामी दयानन्द की मान्यता बड़ी उदार है । वे लिखते हैं :

"जो प्रजा न हो तो राजा किसका ? और राजा न हो तो प्रजा किसकी कहावे । दोनों अपने-अपने काम में स्वतंत्र और मिले हुए प्रीतियुक्त काम में परतन्त्र रहें । प्रजा की साधारण सम्मति के विरुद्ध राजा या राजपुरुष न हो । राजा की आज्ञा के विरुद्ध राजपुरुष वा प्रजा न चले ।" पृ० २५७ । जनतन्त्र का इतना सुस्पष्ट सम्मान उस युग में अन्यत्र दुर्लभ है ।

स्वामी जी अपने देश में राजकीय व्यवस्था, न्याय साक्ष्य आदि की पद्धति मनुस्मृति के आधार पर वर्णन करते हैं । उन्होंने विवादों का निर्णय करना, साक्षियों का ग्रहण करना और दण्ड की व्यवस्था करना आदि विषयों का बड़े विस्तार से वर्णन किया है । दण्ड के सम्बन्ध में वे मनुस्मृति के आधार पर यह वर्णन करते हैं कि जिसका जितना ऊँचा पद हो उसको उतना ही अधिक दायित्वपूर्ण होना चाहिये और यदि वह अपराध करे तो उसे उतना ही अधिक दण्ड मिलना चाहिए । साधारण मनुष्य की अपेक्षा राजा को सहस्र गुना दण्ड होना चाहिए । मन्त्रियों को आठ सौ गुणा और उसी प्रकार घटते-घटते राजपुरुरष चपरासी आदि को साधारण मनुष्य की अपेक्षा आठ गुना से कम दण्ड न होना चाहिये । स्वामी जी लिखते हैं—

"जैसे सिंह अधिक और बकरी थोड़े ही दण्ड के वश में आ जाती है, इसलिये राज़ा से लेकर-छोटे से छोटे भत्य पर्यन्त राजपुरुषों को अपराध में प्रजापुरुषों से अधिक दण्ड होना चाहिये ।" पृ० २६८ ।

इसी प्रकार ब्राह्मण को सबसे अधिक, क्षत्रिय को उससे कम, वैश्य को उससे कम, शूद्र को उससे भी कम दण्ड देना चाहिये । अभिप्राय यह हुआ कि जो अधिक विद्वान् है उसे अधिक दायित्वपूर्ण आचरण करना चाहिये । स्वामी जी व्यभिचारियों को बड़े कठोर दण्ड की व्यवस्था करते हैं ।

ईशावास्यम्
पी-३०, कालिन्दी
कोलकाता-७०००८९

फोन (०३३) २५२२२६३६
चलभाष : ०९४३२३०१६०२

आर्य संसार के ग्राहकों/पाठकों से निवेदन

आर्य संसार मासिक पत्र का वार्षिक शुल्क १००) है । पत्रिका वे सुचारूप से संचालन के लिए धन की आवश्यकता होती है किन्तु अधिकांश ग्राहकों / पाठकों की तरफ से सहयोग राशि अप्राप्त रह जाती है । अतः ग्राहकों से अनुरोध है कि जिन सदस्यों ने सहयोग राशि नहीं भेजी है कृपया अवश्य भेज दें अन्यथा जिनका वार्षिक शुल्क दो वर्ष से ज्यादा बाकी होगा उन्हें पत्रिका भेजना बन्द करने के लिए हम बाध्य होंगे । बार-बार की असुविधा से बचने के लिए १०००) रुपया भेजकर आजीवन सदस्य बनें ।

राजेन्द्र प्रसाद जायसवाल
सह-सम्पादक

www.thearyasamaj.org

भ्रष्टाचार मिटाने का सुझाव

प्रो० उमाकान्त उपाध्याय

भ्रष्टाचार की समस्या बहुआयामी और संक्रामक है । बहुआयामी कहना न्यूनोक्ति है । वर्तमान समय में भ्रष्टाचार सर्वव्यापक लगता है । इस समय हमारे देश में शायद ही कोई क्षेत्र होगा जिसमें ईमानदारी से काम हो जाता है । सबसे नीचे के स्तर पर गाँव के लेखपाल से लेकर तहसील तक और तहसील से लेकर जिले के स्तर तक शायद ही कोई काम होगा जो ईमानदारी से, बिना कुछ लिये-दिये सम्पन्न हो पाता है । जिले से प्रान्त की राजधानियाँ तथा देश की राजधानी दिल्ली तक सर्वत्र भ्रष्टाचार फैला हुआ है । राजनीतिक पार्टियों में और सरकार में सब जगह संसाधनों के आंकड़े जोड़े-घटाये जाते हैं । चरित्र और ईमानदारी का मूल्य लगभग शून्य हो गया है । चुनाव में किसको टिकट दिया जाये, निर्वाचित होने पर किसे मंत्रिमण्डल में लिया जाये, मंत्रिमण्डल में भी किसको क्या विभाग सौंपा जाये, ये सभी निर्णय संसाधनों के जुटाने के हिसाब से ही तय किये जाते हैं । मंत्रिमण्डल के बाहर भी ऐसे बहुत से पद पोस्ट होते हैं जिनमें बहुत पर्याप्त आर्थिक उपलब्धि होती है । इन सभी नियुक्तियों में योग्यता कम और पार्टी के लिए संसाधन एकत्र करने का अधिक विचार रखा जाता है । जो व्यक्ति पार्टी के लिए जितना अधिक फण्ड ला सकता है, उसका उतना अधिक मूल्य पद पोस्ट की नियुक्तियों में लगाया जाता है ।

सरकारी काम-काज में ढिठाई या निर्लज्जता इतनी अधिक बढ़ गयी है कि अच्छी-बड़ी संख्या में लगभग एक तिहाई से भी अधिक विधायक और सांसद अपराधिक मामलों से जुड़े हुए हैं । इस समय तो भारत के केन्द्रीय मंत्रिमण्डल में एक घोटाले के बाद दूसरा घोटाला और दूसरे घोटाले के बाद तीसरा घोटाला, घोटालों की शृखला बनती जा रही है और सरकार है कि अपनी विश्वसनीयता का प्रबन्धन जैसे-तैसे किये जा रही है और सरकार को बचाये जा रही है ।

यह केवल सरकार और चुनाव की ही बात नहीं है बल्कि आज किसी भी क्षेत्र में बिना परोक्ष की व्यवस्था के कोई काम नहीं हो पा रहा है । चपरासी से लेकर बाबूगिरी, अध्यापिकी या कोई अन्य नियुक्ति बिना परोक्ष प्रबन्धन के शायद ही कहीं हो पा रही होगी ।

भ्रष्टाचार केवल सरकारी काम-काज या राजनीति में ही नहीं है । सामाजिक स्तर पर शुद्ध सामान, बिना मिलावट के कोई वस्तु, अच्छी, शुद्ध, सही दवाइयों का भी मिलना दुर्लभ हो गया है । थोक बाजार हो या खुदरा बाजार हो, शुद्ध वस्तुओं का मिलना कठिन हो गया है ।

राजनीति और बाजार की बात तो अपनी जगह पर है । इन क्षेत्रों में भ्रष्टाचार और बेईमानी के आर्थिक आकर्षण हैं । इस समय सामाजिक स्तर पर इतना भ्रष्टाचार, इतना दुराचार, इतना कुत्सित कदाचार है जैसा पहले सुनने को नहीं मिलता था । बलात्कार, व्यभिचार, यौन-उत्पीड़न, आत्महत्या,

www.thearyasamaj.org

हत्या और भ्रूणहत्या जैसे अपराधों से समाचार पत्र भरे हुए हैं । इधर सरकार है कि एक्साइज ड्यूटी कमाने के लिए शराब, नाइट क्लब, रात की रंगीनियाँ और भी अन्य प्रकार के दुराचार के उत्तेजक विज्ञापनों को बहुत सुलभ किये गये हैं । एक प्रकार से देखें तो इस समय भ्रष्टाचार अपने विभिन्न रूपों में देश के सभी क्षेत्रों में व्याप्त हो गया है । इस तरह इतने व्यापक पैमाने पर भ्रष्टाचार मिटाने का उपाय खोजना सभी विचारशीलों का आवश्यक नैतिक दायित्व बनता है ।

भ्रष्टाचार का कारण–भ्रष्टाचार बौद्धिक तथा आध्यात्मिक मानसिक विकार का फल है । यह चरित्रगत विकार से उत्पन्न होता है । अतः भ्रष्टाचार का समाधान मन को शुद्ध करने और चरित्र को सुधारने से है । यह केवल थाना-पुलिस , न्यायालय के क्षेत्र से अलग भी 'समाधान' की अपेक्षा रखता है । भ्रष्टाचार का समूल, समग्र, उन्मूलन तो आज के समय में असम्भव सा ही लगता है किन्तु इसे पर्याप्त सीमा तक कम करने का उपाय सम्भव है । भ्रष्टाचार कम करने, मिटाने के दो प्रकार के कार्यक्रम समझ में आते हैं–(१) विधेयात्मक उपाय और (२) नियन्त्रात्मक उपाय ।

(१) विधेयात्मक उपाय– विधेयात्मक उपाय आध्यात्मिक एवं नैतिक शिक्षा और समाज की चिन्तनधारा से सम्बन्धित है । आज की हमारी शिक्षा सर्वथा एकांगी हो गयी है । इस समय शिक्षा में बुद्धि की तीव्रता, विज्ञान और तकनीकी (टेक्नालॉजी) पर जोर दिया जा रहा है । नैतिकता, आदर्श, मानवता, सत्य, कर्त्तव्य, सामाजिक दायित्व आदि पर बहुत कम ध्यान दिया जा रहा है । इस समय शिक्षा मंत्रालय को मानव संसाधन प्रबन्धन का रूप दे दिया गया है । समाज में शान्ति, सुव्यवस्था, सदाचार इत्यादि शिक्षा के साध्य थे । इस समय शिक्षा का उद्देश्य मानव संसाधन के द्वारा आर्थिक विकास मात्र रह गया है । पहले विद्यालयों की पुस्तकों में आदर्श, सच्चरित्रता, ईमानदारी आदि के पाठ पाठ्य पुस्तकों में सम्मिलित होते थे । श्रवण कुमार, सत्य हरिश्चन्द्र की कथाएँ तो बहुत दूर चली गयीं । आज तो ''पंच परमेश्वर'' और ''नमक का दारोगा'' जैसी चरित्र को बल देने वाली कहानियाँ भी नहीं पढ़ाई जा रही हैं । इस समय विज्ञान, परमाणु, टेक्नोलॉजी आदि पर अधिक जोर है । हमारा आशय यह है कि विज्ञान और टेक्नोलॉजी बहुत आवश्यक है और उन्हें अवश्य ही पढ़ाना चाहिए किन्तु चरित्र को सुधारने वाले तंत्रों की उपेक्षा नहीं होनी चाहिए । सामाजिक माहौल को भी सत्याचार मूलक बनाना आवश्यक है ।

इधर अभी हाल में मानव संसाधन मंत्रालय के नये मन्त्री जी श्री एम. एम. पल्लम राजू ने यह घोषणा की है कि शिक्षा में नैतिकता को स्थान देने की बहुत अधिक आवश्यकता है । हम मानव संसाधन मंत्री जी को धन्यवाद तो दे सकते हैं कि उन्हें नैतिकता का ध्यान आया । किन्तु केन्द्रीय सरकार और प्रान्तीय सरकारों की अन्य नीतियों को देखते हुए यह कठिन लगता है कि नैतिक शिक्षा को उसका उचित स्थान मिल पायेगा । केन्द्रीय सरकार और अनेक प्रान्तीय सरकारें राजस्व की वसूली बढ़ाने के लिये शराब, जुआ, नाइट क्लब, होटलों में रंगीनियों को प्रोत्साहन देने पर तुली हुई हैं । भारत आज भी लगभग ८०% प्रतिशत गाँव में बसता है । आज गांव में भी संचार माध्यम के बदौलत टी०वी०, इण्टरनेट आदि की पहुँच के कारण शराब और दुराचार, कदाचार बड़ी तेजी से बढ़ रहा है । सरकार

www.thearyasamaj.org

मतदाताओं को लुभाने के लिए राहत की व्यवस्था कर रही है । बेकारी भत्ता, विधवाओं को भत्ता राहत दी जा रही है। ग्रामीण रोजगार योजना में काम की नहीं, रुपया लूटने की होड़ लगी हुई है । कई प्रान्तों में इस लूट के हिसाब के लिए सी०बी० आई० की जाँच की मांग हो रही है। किन्तु सरकार वोट के लिए रुपये बाँट रही है । राहत और सहायता आपत्ति काल में अल्पकालिक उचित हो सकती है । किन्तु नागरिकों में परिश्रम शीलता, अपनी मेहनत पर निर्भरता का चरित्र पैदा करना चाहिए । लोग परिश्रम करें और रुपया पावें । नागरिकों में अकर्मण्यता को प्रोत्साहन देना राष्ट्रीय अपराध है ।

मातृभूमि या राष्ट्र को धारण करने वाले स्तम्भ, तत्वों का एक परिगणन अथर्ववेद के भूमिसूक्त में मिलता है । वह परिगणन भी राष्ट्र निर्माण और भ्रष्टाचार के उन्मूलक की दृष्टि से बहुत उपयोगी हैं—

''सत्यं बृहदृतमुग्रं दीक्षा तपो ब्रह्म यज्ञः पृथिवींधारयन्ति ।
सा नो भूतस्य भव्यस्य पत्न्युर लोकं पृथिवी नः कृणोतु ।।'' अथर्ववेद० १२-१-१

राष्ट्र को धारण करने वाले ये तत्व हैं— (१) सत्यम्-शासक और जनता दोनों ही मनवचन कर्म-से सत्य का पालन करे । (२) वृहत्—महान्, उद्यम, उद्योग । (३) ऋतम्—उचित । (४) उग्रम्—तेजस्विता, बुद्धि, शक्ति, सेना आदि । (५) दीक्षा—उद्देश्य के लिए समर्पण । (६) तपः—स्वकर्त्तव्य में परिश्रम । (७) ब्रह्म—महान् । (८) यज्ञः—निःस्वार्थ, समन्वय, सामन्जस्य, पूज्यों का सम्मान इत्यादि । ये आठ तत्व राष्ट्र को स्तम्भ की तरह धारण करते हैं। ऐसा राष्ट्र अपने अतीत, वर्तमान और भविष्यत् को महान बनाता है।

इस समय भी हमें उचित है कि हम अपनी शिक्षा को, पाठ्यक्रम को एकांगी न रहने दें और विज्ञान बुद्धि, टेक्नोलॉजी के साथ कर्त्तव्य, आदर्श, ईमानदारी और चरित्र की भी शिक्षा दें ।

नियन्त्रात्मक उपाय—राष्ट्र में कुछ ऐसे नीच प्रकृति के दुष्ट लोग होते हैं जिन पर आदर्श, चरित्र, ईमानदारी सम्बन्धी शिक्षाओं का प्रभाव नहीं पड़ता। उन पर केवल डण्डे का दण्ड का, भय ही कुछ काम कर सकता है। ऐसे लोगों के लिए थाना-पुलिस,न्यायालय, सतर्कता-आयोग, लोकायुक्त, लोकपाल आदि की व्यवस्था बनायी जाती है । आज तो हमारे देश में यह नियन्त्रात्मक व्यवस्था भी लंगड़ी-लूली हो चली है । शासनतन्त्र इस नियन्त्रण को भी आधे-अधूरे मन से लगाना चाहता है । नियन्त्रण करे भी तो कौन जब शासनतन्त्र स्वयं भ्रष्टाचार में डूबा हुआ हो । आज तो किसी भी शासन के अधिकारी को शायद ही कानून से डर लगता हो । मनु महाराज ने लिखा है—**''दण्डः शास्ति प्रजाः सर्वाः दण्ड एवाभि रक्षति ।''** दण्ड का सब पर शासन है और दण्ड रक्षा करता है।

आज तो शासन को भी सोचना पड़ता कि उनका दण्ड विधान कितना कारगर है ?

ईशावास्यम्

फोन (०३३) २५२२२६३६ पी-३०, कालिन्दी

चलभाष : ०९४३२३०१६०२ कोलकाता-७०००८९

—०—

www.thearyasamaj.org

सत्य सनातन वैदिक धर्म : आज की आवश्यकता

श्री राम निवास गुणग्राहक

धर्म शब्द इतने व्यापक अर्थों वाला है कि संस्कृत व अन्य किसी भाषा में इसका पर्यायवाची शब्द नहीं मिलता। मानव जीवन के लिए धर्म की उपयोगिता प्रकट करते हुए ऋषिवर कणाद वैशेषिक दर्शन में लिखते **हैं—'यतोऽभ्युदय निःश्रेयससिद्धि स धर्मः ।'** (१.१.४) अर्थात् जिससे मनुष्य का यह लोक और परलोक दोनों सुखद, शान्ति प्रद और कल्याणमय हों तथा मोक्ष की प्राप्ति हो, उसे धर्म कहते हैं। मीमांसा की भाषा में बात करें तो 'यथा य एव' श्रेयस्करः 'स धर्म शब्देन उच्यते' अर्थात् मनुष्य मात्र के लिए जो भी कुछ श्रेयस्कर है, कल्याण प्रद है—वह धर्म शब्द से जाना जाता है। हमारे दर्शनकार ऋषियों के अनुसार धर्म मनुष्य के लिए एक अक्षय सुख, शान्ति व मोक्ष —आनन्द का देने वाला है। धर्म की महत्ता और मानव जीवन के लिए उपयोगिता जान लेने के बाद यह प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि आखिर वह धर्म है क्या? मनुष्य का समग्र हित करने वाले धर्म का स्वरूप क्या है ? इस प्रश्न का उत्तर भी हम ऋषियों से ही पूछें तो अधिक उत्तम होगा ? महर्षि मनु महाराज की मान्यता है **'वेदोऽखिलो धर्म मूलम'** अर्थात् सम्पूर्ण वेद ही धर्म का मूल है इसे और स्पष्ट करते हुए वे लिखते हैं **'वेद प्रतिपादितो धर्मः अधर्मस्तद्विपर्ययः'**—अर्थात् जिस-जिस कर्म करने की वेद आज्ञा देते हैं , वह-वह कर्म ही धर्म है। श्रद्धा और निष्ठा पूर्वक पालन करना ही सच्चा धर्म है।

जब संसार में एक मात्र वेदमत ही था, सब वेद धर्म को मानने वाले थे, तो क्या सबका जीवन सुख समृद्धि से परिपूर्ण था ? ऋषि दयानन्द लिखते हैं—**'सृष्टि से ले के पाँच सहस्त्र वर्षों से पूर्व समय पर्यन्त आर्यों का सार्वभौम चक्रवर्ती अर्थात् भूगोल में सर्वोपरि एक मात्र राज्य था।'** अन्यत्र ऋषि लिखते हैं—**'स्वायंभुव राजा से लेकर पाण्डव पर्यन्त आर्यों का चक्रवर्ती राज्य रहा है।'** महाभारत के युद्ध से पूर्व सर्वत्र वेद धर्म का बोलबाला था, वेद धर्म का पालन करने के कारण भारत का एक ओर भूगोल भर में चक्रवर्ती राज्य था, तो दूसरी ओर भारत को **'विश्व गुरु'** और **'सोने की चिड़ियाँ'** जैसे गौरव पूर्ण सम्बोधनों के साथ पुकारा जाता था। भारत का वह प्राचीन गौरव, वह चक्रवर्ती राज्य आज हमारे लिए एक सुहाने सपने जैसा लगता है। प्रत्येक भारतवासी का हृदय चाहता है कि हमारे प्यारे राष्ट्र को वह गौरव पुनः प्राप्त हो जाए। हाँ-हाँ—हो सकता है, क्यों नहीं हो सकता ? अगर हम उन्हीं वैदिक आदर्शों को जीवन के धरातल पर स्वीकार कर लें, ऋषियों के बताए हुए उसी वैदिक धर्म को अपने जीवन का आधार बना लें, तो कोई कारण नहीं कि हमें वह गौरव प्राप्त न हो ! धर्म के सम्बन्ध में हमसे जो थोड़ी सी भूल महाभारत के बाद हो गई थी, उसे सुधार लें, तो भारत पुनः 'विश्व गुरु' और 'सोने की चिड़ियाँ' बनकर अपने खोए हुए गौरव को पा सकता है। कितने भाग्यवान् होंगे वे विवेकशील सज्जन, जो धर्म के नाम पर फैल चुकी अधार्मिक प्रवृत्तियों से ऊपर उठकर परमात्मा की वेद वाणी पर श्रद्धा टिकाते हुए युग परिवर्तनकारी अभियान में सक्रिय भूमिका निभाएँगे ? **महानुभावो**

www.thearyasamaj.org

! हम ऋषियों की संतान हैं, हमारे रोम-रोम में गौतम, क़पिल, कणाद और पतञ्जलि का तप, तेज और स्वाभिमान हिलोरें ले रहा है । उनकी तपः साधना से प्राप्त पावन प्रज्ञा से प्रसूत अथाह ज्ञान राशि आज भी हमारी प्रतीक्षा कर रही है कि हम उसे जीवन का अंग बनाकर उनकी तपस्या को सार्थक करें । उन ऋषियों ने ये अमूल्य ग्रन्थ हमारे कल्याण की भावना लेकर ही लिखे थे ।

धर्म को लेकर कई बार हम बड़े गौरव के साथ कहते हैं कि हमारा धर्म सनातन धर्म है । हम सनातन का अर्थ समझ लें—काल वाचक तीन शब्द हैं । अधुनातन अर्थात् वर्तमान काल से या नवीन, दूसरा पुरातन अर्थात् प्राचीन काल से या पुराना और तीसरा है सनातन अर्थात् प्रारम्भ से या नित्य । जब हम सनातन धर्म कहते हैं तो इसका अर्थ होता है, प्रारम्भ से चले आने वाला नित्य धर्म ! और वह नित्य धर्म वेद ही हो सकता है, क्योंकि वह सृष्टि के प्रारम्भ से ही चला आ रहा है । धर्म के नाम पर वर्तमान में जो कुछ चल रहा है, वह महाभारत के युद्ध के बाद वेद विद्या के लोप हो जाने के बाद पैदा हुआ है । यह पुरातन तो हो सकता है सनातन नहीं हो सकता । सनातन तो वही है, जो वेदों में कहा है, सनातन तो वही है जो महर्षि मनु से लेकर याज्ञवल्क्य, गौतम, कपिल, कणाद व व्यास ने अपने ग्रन्थों में लिखा है ।

ऋषि महर्षियों के बताए वेद धर्म को त्यागकर, सनातन धर्म के स्थान पर पुरातन प्रवृत्तियों को धर्म के रूप में स्वीकार करके आज हमारी क्या स्थिति हो गई है ? धर्म के नाम पर पिछले कुछ वर्षों से जो कुछ देखने और सुनने को मिल रहा है, देश के विभिन्न क्षेत्रों से हमारे आधुनिक धर्माचार्यों की जो लीलाएँ देखने को मिल रही हैं, क्या उन सबको हम अपने सत्य सनातन धर्म का अंग मान सकते हैं? हमारे धार्मिक स्थलों का जो नैतिक क्षरण हो रहा है, भगवा वस्त्रों की गरिमा जिस ढ़ंग से नीलाम की जा रही है, क्या यह हमारे सत्य सनातन धर्म के साथ मेल खाती है ? धर्म दिखावे की वस्तु नहीं है । धर्म के नाम पर वर्तमान में हमारे धर्मस्थलों व धार्मिक आयोजनों में जो कुछ हो रहा है, यदि वही सनातन धर्म है, तो अधर्म की परिभाषा क्या होगी ?

आज ज्ञान—विज्ञान का युग है, आज के युग में धर्म के नाम पर वह सब कुछ नहीं चल सकता जो पिछले हजारों वर्षों से चला आ रहा हैं । आज धर्म के सम्बन्ध में उठने वाले प्रश्नों को हम धर्म में अकल का दखल नहीं होना चाहिए, कह कर नहीं टाल सकते । टालें भी क्यों ? हमारे ऋषियों ने हमें धर्म ज्ञान के साथ यह भी सिखाया है—**'तर्क प्रमाणभ्यां वस्तु सिद्धिः न तु संकल्प मात्रेण'** अर्थात् किसी वस्तु की सिद्धि तर्क और प्रमाणों से की जाती है, संकल्प मात्र से नहीं । धर्म के सम्बन्ध में उठने वाले प्रश्नों के उत्तर हमें तर्क और प्रमाणों सहित देने होंगे । धर्म कोरी आस्था या विश्वास का विषय नहीं, तर्क का विषय भी है । महर्षि मनु कहते हैं—**'यस्तर्केण अनुसन्धत्ते स धर्मो वेद नेतरः'** अर्थात् जो तर्क से सिद्ध किया जा सके उसी को धर्म जानो, अन्य को नहीं । जो तर्क से सिद्ध न किया जा सके, वह मनु की दृष्टि में धर्म नहीं हो सकता । आज हमारे धर्मग्रन्थ कहे जाने वाली पुस्तकों में जो कुछ लिखा है, वह तर्क द्वारा सिद्ध किया जाना चाहिए । हमारे धार्मिक अनुष्ठान, धार्मिक सिद्धान्त तथा हमारे ईश्वर सम्बन्धी विचार सब कुछ तर्क साध्य होना चाहिए ।

www.thearyasamaj.org

साँच को आँच नहीं, धर्म भी सत्य का दूसरा नाम है, यदि सत्य को तर्क की तपन नही पिघला सकती, तो धर्म को तर्क से क्यों भयभीत होना चाहिए ? तर्कों से डर तो झूठ को लगता है, तर्कों व प्रश्नों से तो झूठ या अधर्म दूर भागता है । जब तक हम धर्म के नाम पर होने वाले अधर्म से अपना पीछा छुड़ाने का संकल्प लेकर सच्चे धर्म को स्वीकार नहीं करेंगे, तब तक सुख शान्ति व आनन्द हमारे जीवन में किस रास्ते प्रवेश कर सकेंगे ?

आज धर्म का अस्तित्व संकट में है । धर्म के नाम पर जो चल रहा है, उसे धर्म कहने का साहस कोई बुद्धिमान नहीं कर सकता । हमारे मनीषियों ने लिखा है—**युद्धे फलं रचनाहि:** अर्थात् बुद्धिमान होने का फल यही है कि मनुष्य आग्रही (जिद्दी) नहीं होता ! पहले से चली आ रही परम्परागत प्रवृत्तियों के गुण, दोषों व लाभ, हानि को विचारे बिना जीवन में स्वीकार कर लेना बुद्धमानी नहीं । महर्षि गौतम न्याय दर्शन में बुद्धि की परिभाषा करते हैं—**'सद्असद् विवेकवती बुद्धि'**—अर्थात् बुद्धि का काम सत्य और असत्य में विवेक करना है । हम सब के पास सत्य और सत्य असत्य का नीर—क्षीर विवेक करने वाली बुद्धि है परम्परागत दुराग्रहों में पड़कर हम सत्य का सम्मान न कर सकें तो यह बुद्धि का घोर अपमान होगा ।

धर्मनिष्ठ लोगों के हृदय में पीड़ा है । हमारे समस्त ऋषि—मुनि जिस वेद धर्म की चर्चा करते हैं, वह आज नकली धर्म के हाथों घायल होकर मरणासन्न अवस्था में है । हमें **'धर्म एवं हतो हन्ति धर्मो रक्षति रक्षित:'** की शिक्षा मिली है, कि धर्म जब मरता है तो सब मर जाते हैं तथा धर्म की रक्षा में ही सबकी रक्षा है । धर्म रक्षक सदा सुरक्षित रहते हैं । **'यतो धर्मस्ततो जय:'** के अमर घोष को हम कैसे भूल सकते हैं ? धर्म का सहारा लेकर चलने वाले धर्म धुरीण मर्यादा पुरुषोत्तम श्री राम ने रावण जैसे कई गुणा प्रबल शत्रु को धाराशायी कर दिया था । हमें सिखाया जाता है—'गुरु आज्ञा हि अविचारणीय' अर्थात् गुरु की आज्ञा पर विचार ही नहीं करना चाहिए, उसे श्रद्धापूर्वक स्वीकार कर लेना चाहिए । यह कोई ऋषि वाक्य नहीं, यह तो आज के गुरुओं ने अपना प्रभाव बनाने के लिए बना लिया है । ऋषियों की मान्यता तो यह रही है—**'शत्रोरपि गुणा:वाच्या दोषा वाच्या गुरोरपि'** अर्थात् अच्छे गुण यदि शत्रु में भी हैं, तो उसकी भी प्रशंसा करो तथा दोष गुरु में भी दिखें तो उन्हें कहने में भी संकोच न करो । गुरु को कुछ भी करने या बोलने का अधिकार कैसे दिया जा सकता है ? इस प्रवृत्ति को तोड़ना होगा । उपनिषदों में अनेक स्थानों पर वर्णन आता है कि शिष्य खुले हृदय से गुरु जी से प्रश्नोत्तर व शंका समाधान करते थे । जनक की सभा में याज्ञवल्क्य और गार्गी का संवाद सब जानते हैं, फिर आज इस पर प्रतिबन्ध क्यों ? गुरु को यह अधिकार किसने दिया कि वह शिष्यों की बुद्धि को ताला लगा दे ? उन्हें सोचने ही न दे ? गुरु का काम तो शिष्यों के ज्ञान को बढ़ाना है । हमारे धर्माचार्यों व धर्म गुरुओं ने पता नहीं क्यों, सनातन धर्म की वैदिक शिक्षाओं की पूरी तरह उलट कर रख दिया । ऋषि युग की सारी शिक्षाओं व मान्यताओं को उलट देने वाले आज के धर्माचार्य किस लोक से नई-नई परिभाषाएँ व शिक्षाएँ लेकर आए हैं ?

वेद मानव के लिए कितना कल्याण कारक है, यह जानने के लिए हमें महर्षि पतञ्जलि के महाभाष्य

www.thearyasamaj.org

का यह वचन हृदय में उतारना होगा । **'एकः शब्दः सम्यक् ज्ञातः सुप्रयुक्तः स्वर्गे लोके कामधुक् भवति।'** अर्थात् वेद का एक शब्द भी, यदि उसका सही अर्थ जान लिया हो, और उसे जीवन में उतार लिया हो, तो वह संसार के समस्त श्रेष्ठ सुखों की सब कामनाओं को पूर्ण कर देता है । ऋषियों की सोच बड़ी गहरी होती है, उनके ग्रन्थों को देखकर उनकी ज्ञान—गम्भीरता का आभास हो जाता है । ऐसे तत्त्वदर्शी ऋषि वेद के एक शब्द को भली-भाँति जानकर जीवन में उतार लेने पर सब श्रेष्ठ कामनाओं के पूर्ण होने की बात कहते हैं, उन ऋषियों ने अपना सारा जीवन वेद-ज्ञान की साधना में लगा लिया था ।

धर्म के सम्बन्ध में बड़ा रोचक और अत्यन्त प्रेरणा देने वाला एक ऐतिहासिक विवरण देने का लोभ नहीं रोक पा रहा हूँ । सन् १८९३ का विश्व-धर्म सम्मेलन शिकागो में हुआ था । हम भारतीयों के लिए इसका विशेष महत्त्व इसलिए भी है, कि उस सम्मेलन में भारतीय धर्म और दर्शन का प्रतिनिधित्व स्वामी विवेकानन्द जी ने किया था । स्वामी जी के कारण इस सम्मेलन में भारतीय प्रतिभा की कीर्ति तो बहुत फैली, मगर वेद ज्ञान में पारंगत न होने के कारण स्वामी विवेकानन्द जी एक महान् इतिहास लिखने से सर्वथा चूक गए । उस सम्मेलन में विश्व के धर्माचार्य, दार्शनिक एवं वैज्ञानिकों ने मिलकर एक अभिनव प्रयास किया । उन्होंने एक समिति बनाई जिसमें धर्माचार्य व दार्शनिकों के साथ वैज्ञानिक भी थे । उन सब ने मिलकर एक ऐसे विश्व धर्म की सम्भावनाओं पर चिन्तन किया, जिसे सभी स्वीकार कर सकें तथा जो सच्चे अर्थों में विश्व—मानव का कल्याण कर सके । इस दिशा में गहन विचार करने पर उन्होंने सम्भावित विश्व-धर्म की चार कसौटियाँ निर्धारित कीं । उन्होंने एक स्वर से घोषणा की, कि जो भी धर्म विचार कसौटियों पर खरा उतरेगा, वह विश्व धर्म का सम्मान प्राप्त कर सकेगा । वे चार कसौटियाँ हैं (१) समता (Equality) (२) विश्व व्यापी भ्रातृभाव (Universal Brotherhood)(३) सर्वांग पूर्ण विकास (Harmonious Development) (४) वैज्ञानिक आधार (Scientific Base) । इन चार कसौटियों पर संक्षिप्त विचार करने के लिए आगे बढ़ने से पहले हम यह बताते चलें कि सम्मेलन में आए हुए किसी दार्शनिक व धर्माचार्य का धर्म व दर्शन इन चार कसौटियों पर खरा सिद्ध नहीं हुआ, जिनमें स्वामी विवेकानन्द जी भी सम्मिलित हैं । आज हमारे हृदय में एक टीस होती है कि ऋषि—महर्षियों द्वारा अनुमोदित वैदिक धर्म की ध्वजा लेकर स्वामी जी शिकागो गये होते, तो आज वैदिक धर्म की कीर्ति पताका विश्व पटल पर और अधिक ऊँची होकर तथा कुछ अधिक चमक के साथ लहरा रही होती ।

इन चार कसौटियों को समझें ।

समता—समता का सीधा अर्थ समानता होता है । विश्व धर्म का पहला गुण यह हो, कि वह मनुष्य-मनुष्य में किसी प्रकार का भी भेद भाव न करे । धार्मिक अनुष्ठान में, पूजा पद्धति में, सामाजिक व्यवहार में तथा ईश्वर की पूजा उपासना के अधिकार तक में सबको समान मानने वाला धर्म ही विश्व धर्म हो सकता है ।

विश्वव्यापी भ्रातृभाव :— सबको समान मानने के बाद दूसरी बात आती है कि सबको अपना

www.thearyasamaj.org

मानकर चले । ऐसा धर्म जों विश्व के मानव मात्र को जाति, नस्ल तथा लिंग भेद में न बाँटकर सबको अपना समझने के उपदेश दे । मानव-मानव के साथ भाई-भाई जैसा अपनापन बनाने की शिक्षा व उपदेश देने वाला धर्म ही विश्वधर्म बन सकता है । धर्म के नाम पर किसी भी प्रकार का भेद भाव और अपने-पराये की भावना के रंग में रंगा कोई धर्म विश्वमानव को क्यों कर स्वीकार होगा ?

सर्वाङ्गीण विकास–विश्वधर्म की तीसरी विशेषता यह होनी चाहिए कि वह मनुष्य की सर्वाङ्गीण उन्नति एवं समग्र विकास की सैद्धान्तिक रूपरेखा प्रस्तुत करता हो । मानव का शारीरिक विकास, बौद्धिक विकास, आत्मिक विकास, सामाजिक विकास आदि की सम्पूर्ण प्रक्रिया प्रस्तुत कर सकने वाले धर्म को विश्वमानव निःसंकोच होकर उत्साहपूर्वक स्वीकार करेगा ही । सामाजिक संरचना के प्रत्येक क्षेत्र में काम करने वाले डॉक्टर, वकील, किसान, व्यापारी व राज-काज में लगे विभिन्न लोगों से लेकर श्रमिक तक के सम्पूर्ण जीवन के विकास की व्यवस्था देने वाले धर्म को विश्वधर्म माना जाना समय की माँग है।

वैज्ञानिक आधार :– विश्वधर्म चुने जाने की प्रतिस्पर्धा में विजयी होने वाले धर्म के सम्पूर्ण सिद्धान्त, उसके धार्मिक अनुष्ठान व धर्म सम्बन्धी अवधारणाएँ, मान्यताएँ पूर्णतः वैज्ञानिक होनी चाहिए। धर्म ग्रन्थों का विज्ञान के विरुद्ध होना संसार का सबसे बड़ा मानवीय अभिशाप है । विज्ञान विरुद्ध तथ्यों को धर्म का नाम देकर प्रचारित-प्रसारित करना किन्हीं लोगों के लिए पेट भरने का कुटिल अभियान तो हो सकता है, धर्म नहीं ।

वेद पढ़ने वाला कोई भी विवेकशील सज्जन, निष्पक्ष होकर विचार करे तो वह पाएगा कि १८९३ में शिकागो के विश्वधर्म सम्मेलन में संसार भर के धर्माचार्यों, दार्शनिकों व वैज्ञानिकों ने विश्व-धर्म की जो चार कसौटी स्वीकार की थी, उन पर संसार का एक मात्र सत्य सनातन वैदिक धर्म ही पूर्णतः खरा उतरता है ।

धर्म कभी हमारे राष्ट्र की सबसे बड़ी शक्ति हुआ करता था, धर्म हमारे सामाजिक व पारिवारिक जीवन को मर्यादित रखता था । आज वही धर्म हमारे राष्ट्रीय और सामाजिक जीवन से लेकर पारिवारिक और व्यक्तिगत जीवन में बिगाड़ और बिखराव ही पैदा कर रहा है । धर्म की वह पावनता हमें दुबारा लौटानी होगी । धर्म के सच्चे स्वरूप को समझकर उसके अनुसार जीवन बनाना होगा । **धर्मशील सज्जनों और देवियों !** धार्मिक बनना चाहते हो तो सच्चे धार्मिक बनो । धार्मिक दिखना अलग बात है तथा धार्मिक होना अलग बात है । धार्मिक दिखने, धर्मात्मा होने का दिखावा करने से धर्म का फल नहीं मिलता । असली और नकली धार्मिक को आज सामान्य जनता भी जानती है तो क्या परमात्मा नहीं जानता होगा ? उसे धोखा देना सम्भव नहीं है, जो देने की कोशिश कर रहे हैं उन्हें भी समझाओ । धर्म की पावनता को नष्ट करने वालों से कह दो–

दे मुझको मिटा जालिम, मत धर्म मिटा मेरा ।
ये धर्म मेरा मेरे ऋषियों की निशानी है ।

गांव सूरौता, पत्रालय–अंवार, जनपद–भरतपुर (राज०) -३२१००१
चलभाष :- ९९७११७१७९७, दिल्ली ९६९८५५३३४६

www.thearyasamaj.org

ओ३म्

सत्य-ज्ञान एवं सत्य-नीति पर आधारित अन्तरराष्ट्रीय सत्र की मूल्यपरक विद्यालयी पाठ्य पुस्तकें कक्षा १ से १२ तक की बनें

– श्री ब्रह्म प्रकाश लाहोटी

अन्तःस्थ ज्ञान का विकास एवं आचरण में उसका प्रयोग करने की प्रविधि का नाम शिक्षा है। आदर्श शिक्षा का उद्देश्य चरित्र-निर्माण, अन्तर्निहित शक्तियों का जागरण कर बच्चों का शारीरिक संवर्धन, मानसिक, आत्मिक विकास करना है । शिक्षा–शास्त्र का उद्देश्य अध्ययन की सरल प्रणाली, छात्रों के मनोभावों के साथ उनको प्रबुद्ध करने की शैली, मन को प्रसन्न करने वाली तथा मानवता का अध्ययनार्थी में संचार कर मन, वचन, कर्म की एकरूपता लाना है ।

आज के वैश्वीकरण के इस युग में मानवीय मूल्यों का क्षरण शिक्षाविदों के लिये गम्भीर चिंता का विषय है । मानव संसाधन विकास मंत्रालय की स्थायी संसदीय समिति ने सन् १९९९ में यह विचार व्यक्त किया कि **'खेद की बात है कि पिछले चार दशक में जो समन्वित प्रयास किये गये, उनके वांछित परिणाम सामने नहीं आये हैं । हमारी शिक्षा को मूल्य परक बनाने के लिये योजनाएँ और रणनीतियाँ बनाने का कार्य अभी कागदों में सिमटा हुआ है । जीवन–मूल्य सामाजिक मान्यता प्राप्त लक्ष्य और इच्छाएं हैं । इनका वर्गीकरण शारीरिक, मानसिक, भावनात्मक, नैतिक, धार्मिक, सांस्कृतिक, आध्यात्मिक और सौन्दर्य बोधात्मक मूल्यों के रूप में किया जाता है । मानव की अन्तर्निहित पूर्णता को अभिव्यक्त करना ही शिक्षा है । सभी प्रकार की शिक्षा और अभ्यास का उद्देश्य मानव निर्माण ही है । आज मूल्य परक शिक्षा के कार्यक्रम को सफल बनाने के लिये सार्वभौमिक रूप से स्वीकार्य प्राथमिक मूल्य सत्य, प्रेम, निष्ठा, शांति और अहिंसा पर आधृत होने चाहिये ।'** केन्द्रीय मानव संसाधन विकास राज्यमंत्री शशि थरूर ने नवम्बर २०१२ में साफ कहा है कि सरकार के लिये शैक्षिक सुधारों की प्राथमिकता बनी हुई है ।

शिक्षा में गुणवता की गिरावट से सुसंस्कार, आत्मविश्वास, मौलिकता का अभाव हो गया है । आज विद्यालय लार्ड मैकाले की अंग्रेजियत संस्कारों से ओतप्रोत शिक्षा के गढ़ बने हुये हैं । विद्यालय विशाल समाज के लघु संस्करण ही तो हैं, अतः मानवीय मूल्यों के बीजारोपण, अंकुरण की पाठ्य–पुस्तकों की महती आवश्यकता है । आज सरकार के साथ साथ मानव की अन्तरात्मा की पुकार है कि शिक्षा पद्धति की पाठ्य-चर्या मूल्य–परक, ज्ञानोन्मुख हों । बच्चे के सर्वविध स्वास्थ्य, मन, चित्त, बुद्धि एवं जीवात्मा का विकास हो । शारीरिक सौष्ठव, आध्यात्मिक ज्ञान, आत्म-बल के विकास हेतु सैद्धान्तिक एवं प्रायोगिक शिक्षा जरुरी है । शिक्षा की पाठ्य-चर्या अन्तर्निहित मानवीय गुण, जीवन मूल्यों को आचरण में ढलने के योग्य तैयार की जावें, जो व्यवहार में लाने की क्षमता अर्जित करा सके । पाठ्य-चर्या बच्चों के दिमाग में मंथन का काम करे । आज के बच्चों को गुणवता की लुभावनी ऐसी पाठ्य पुस्तकें, कार्टूनों से अधिक प्रिय लगनी चाहिये जिससे आचरणों में ढलकर बच्चे सुसंस्कारित होवें ।

www.thearyasamaj.org

मानव जीवन के आवश्यक अंग सत्य, दया, प्रेम, धैर्य, सहानुभूति, अभय, अहिंसा, अनुशासन, ब्रह्मचर्य, क्षमा, उदारता, साहस, परोपकार, त्याग, राष्ट्रप्रेम, स्वस्थता, आत्मबल, उच्च विचारों को शिक्षा के पाठ्यक्रम में उभारे जाने चाहिये, जिससे सत्यं शिवं सुन्दरम् की भावना का प्रसार हो। ऐसे पाठ्यक्रम से बच्चे विकासशील बनकर कालजयी सिद्धांन्तों को प्रतिपादित करने में समर्थता प्राप्त कर सकें। अष्टांग योग क्रियात्मक विज्ञान है, जिसकी गुणवत्ता द्वारा लक्ष्य प्राप्ति की समर्थता प्राप्त हो सकेगी।

आज के विद्यार्थी आने वाले कल के भावी नागरिक हैं। विद्यालयों में ऐसी मूल्य-परक पुस्तकों से बच्चों को जानकारी मिलने से फल चतुष्टय प्राप्त करायेगी जिससे आचार-विचार, रहन-सहन, खान-पान, व्यवहार पवित्र होंगे तथा जीवन सफल होगा।

मूल्यपरक ऐसी पाठ्यपुस्तकें भटकती हुई मानवता को कल्याण पथ पर अग्रसर करेगी और विश्व नागरिक बनायेगी। शीलरूपी सम्पत्ति उत्पन्न होगी, मानव का व्यक्तित्व संगठित होगा, अनुशासनात्मक जीवन पद्धति के बीज अंकुरित होंगे।

अतः कक्षा १ से १२ तक की विद्यालयी पाठ्य-पुस्तकें मूल्यपरक, लुभावनी, अन्तरराष्ट्रीय स्तर के आधुनितम तकनीक की धर्म, मजहब, मत, पंथ, सम्प्रदाय, विरोधाभास से परे मानवीय मूल्यों की बननी चाहिये जो गुणवता के कारण विश्व के विद्यालयों में लागू होवें जिससे विश्व के मानव सुनिश्चित ही सुखी आनन्दित हो जावेंगे।

डागा कटला, सुजानगढ़-३३१५०७, जिला चूरू (राजस्थान)
फोन : ०१५६८-२२०१६५, २२००५१ मो० : ९४१४०८६५१

आर्य समाज सान्ताक्रुज का ६९ वाँ स्थापना दिवस एवं पुरस्कार समारोह

रविवार दिनांक २५ नवम्बर,२०१२ को आर्य समाज सान्ताक्रुज का ६९वाँ स्थापना दिवस एवं पुरस्कार समारोह आर्य समाज के विशाल सभागृह में मनाया गया। सर्वप्रथम ८.०० बजे से ९.०० बजे तक बृहद् यज्ञ पं० नामदेव आर्य के ब्रह्मत्व में किया गया। यज्ञ में मुख्य यजमान के रूप में डॉ. सत्यपाल सिंह (पुलिस कमिश्नर मुम्बई) सह परिवार ने भाग लिया। उपस्थित विद्वानों ने आशीर्वाद प्रदान किया तथा समाज की ओर से डॉ साहब के पारिवारिक जनों को सम्मानित किया गया। तदनन्तर श्री चन्द्रगुप्त आर्य जी की अध्यक्षता में स्थापना दिवस एवं पुरस्कार समारोह आरम्भ हुआ। मन्त्रोच्चारण के साथ अतिथि एवं पुरस्कार प्राप्तकर्त्ताओं का मंच पर आगमन हुआ।

स्व. झाऊलाल शर्मा गुरूकुल सहायता पुरस्कार प्राप्तकर्त्ता कन्या गुरूकुल महाविद्यालय देहरादून को रुपये १५००१) की घोषणा की गयी/राशि गुरूकुल को भेज दी जायेगी।

श्रीमती भागीदेवी छाबरिया गुरूकुल सहायता पुरस्कार प्राप्तकर्त्ता श्री कृष्ण देवालय गुरूकुल

www.thearyasamaj.org

गोमत से पुरस्कार स्वरूप रूपये १५००१/- का चेक भेजने की उद्घोषणा की गई ।

श्रीमती कृष्णा गान्धी आर्य युवक पुरस्कार प्राप्तकर्त्ता ब्र. रणजीत विवित्सु जी, (ओड़िशा) का संक्षिप्त जीवन परिचय मन्त्री श्री संदीप आर्य ने दिया । आपको श्रीमती कृष्णा गांधी आर्य युवक पुरस्कार स्वरूप रु० १५००१/- का चैक, शॉल, ट्राफी, श्रीफल व माला भेंट कर सम्मानित किया गया । तत्पश्चात् ब्र. रणजीत विवित्सु ने कहा कि मैं जीवन पर्यन्त शिक्षण एवं सेवा का कार्य करता रहूँगा ।

श्रीमती प्रेमलता सहगल युवा महिला पुरस्कार प्राप्तकत्री आचार्या पवित्रा विद्यालंकार जी (दिल्ली) का संक्षिप्त जीवन परिचय श्रीमती रमा आर्य ने प्रस्तुत किया । आपको श्रीमती प्रेमलता सहगल युवा महिला पुरस्कार स्वरुप रु. १५००१/- का चैक , शॉल, ट्राफी, श्रीफल एवं माला से सम्मानित किया गया । इस अवसर पर आचार्या पवित्रा विद्यालंकार जी ने विनम्र भाव से दृढ़ विश्वास प्रगट करते हुए कहा– ''मैं आजीवन शिक्षा एवं वैदिक धर्म के प्रचार-प्रसार के लिये समर्पित रहूँगी ।'' उन्होंने काव्य पाठ करके श्रोताओं को भाव विभोर कर दिया ।

पं० युधिष्ठिर मीमांसक स्मृति पुरस्कार प्राप्तकर्त्ता श्री आचार्य जयकुमार जी (हरियाणा) का संक्षिप्त जीवन परिचय आचार्य रवीन्द्र ने दिया । आपको पं. युधिष्ठिर मीमांसक स्मृति पुरस्कार स्वरूप रु० १५००१/-का चैक , शॉल, ट्राफी, श्रीफल एवं माला से सम्मानित किया गया प्रधान जी को देते हुए आप तक पहुंचाने के लिए उद्घोषणा की गई ।

स्व. नारायणदास हासानन्दानी विशिष्ट वेदांग पुरस्कार प्राप्तकर्त्ता स्वामी सुमेधानन्द सरस्वती जी (राजस्थान) का संक्षिप्त जीवन परिचय श्री संगीत आर्य ने दिया । आपको स्व. नारायणदास हासानन्दानी विशिष्ट वेदांग पुरस्कार स्वरूप रु. २१००१/- का चैक, शाल, ट्राफी, श्रीफल एवं मोती माला से सम्मानित किया गया । आपने अपने सम्मान के सुअवसर पर विचार प्रकट करते हुऐ कहा कि हम सबको आर्य समाज के संगठन की ओर ध्यान देना चाहिए । आर्य समाज से बाहर निकलकर अधिकाधिक लोगों से मिलना चाहिए और उन तक वेदों की विचार धारा पहुँचानी चाहिए ।

श्री चन्द्रगुप्त आर्य प्रधान आर्य समाज सान्ताक्रुज एवं श्री लालचन्द आर्य प्रधान आर्य समाज सान्ताक्रुज ट्रस्ट, श्री पुरूषोत्तम अग्रवाल, श्रीमती सुधा कुमार एवं श्रीमती यशबाला गुप्ता, श्रीमती शशिकला सिंह, श्री रमेश सिंह ने आर्य समाज सान्ताक्रुज की ओर से समस्त आगन्तुक विद्वानों एवं अतिथियों को शाल एवं श्रीफल देकर सम्मानित किया । समस्त कार्यक्रम का संचालन महामन्त्री श्री संगीत आर्य ने किया । अंत में विद्वान्, आगन्तुकों, श्रोताओं और कार्यकर्ताओं का हार्दिक आभार एवं धन्यवाद ज्ञापन किया गया । शान्ति पाठ एवं जयघोष हुआ । ऋषि लंगर के साथ समारोह सम्पन्न हुआ ।

—o—

www.thearyasamaj.org

ओ३म्

''महर्षि के जीवन की कुछ उपयोगी बातें''

– श्री खुशहाल चन्द्र आर्य

बरेली में बहुत दिनों तक व्याख्यान-वारि-वर्षा करने के पश्चात् स्वामी दयानन्द जी आश्विन बदी ४ सं० १९३६ तदनुसार सन् १८७९ को शाहजहांपुर पधारे। विज्ञापनों द्वारा सबको विदित कर दिया कि धर्म-प्रेमी जन नियत समय पर आकर व्याख्यान श्रवण करें और लाभ उठावें। जिनको प्रश्न पूछने हो वे स्वामी जी के पास आकर अपनी शङ्काओं का समाधान करायें और उन्होंने वैदिक सिद्धान्तों के अनुसार कई बिन्दुओं पर व्याख्यान दिये।

१–सच्चा धर्म एक ही है– शाहजहांपुर में सत्य पर व्याख्यान देते हुए स्वामी जी ने कहा, 'संसार में अनेक मत फैल रहें हैं। पन्थाइयों पर विश्वास कर जिज्ञासु के लिए सत्य जानना कठिन है। जिससे पूछो वही अपने पन्थ को सच्चा और दूसरों को झूठा बताता है। इस पर स्वामी जी ने दृष्टान्त दिया कि एक जिज्ञासु किसी तत्त्वदर्शी पण्डित के पास जाकर कहने लगा कि महाराज ! मुझे वह सच्चा धर्म बताइए, जिसके आराधन से मेरा कल्याण हो, मुझे परम धाम की उपलब्धि हो।'

तत्त्वदर्शी महात्मा ने कहा– चलो आपको सद्धर्म का बोध करायें। वे उसे एक मतवादी के पास ले गये। उन्होंने उस मतवादी से पूछा कि 'सत्य-धर्म कौन सा है ? उस पन्थाई पुरूष ने अपने मत की मुक्त कण्ठ से प्रशंसा की और दूसरे मतों की निन्दा की। इस प्रकार वह जिज्ञासु सभी मतवादियों के पास गया। सभी अपने उठने-बैठने की रीति को, अपनी उपासना पद्धति को और अपने धर्म-मन्दिरों को धर्म वर्णन करते थे। प्रत्येक ने अपने ही तीर्थों का यशगान किया। अपनी ही देव-मूर्तियाों को उत्तम बताया। अपने ही धर्म चिन्हों को, बहिरङ्ग साधनों को और अपने ही महापुरुषों के वाक्यों को 'धर्म' प्रदर्शित किया, और अपने से भिन्न मतों की प्रत्येक बात की भरपेट निन्दा की।

प्रत्येक मतवादी की नवीन धारणा, नवीन पद्धति, नूतन धर्म चिन्ह, नई मूर्त्तियाँ और भिन्न-भिन्न तीर्थ देख व सुनकर, उस जिज्ञासु का जी घबरा उठा। मतवादियों के सघन निविड़ वन में फंसकर वह दिशा मूढ़ हो गया। अन्त में वह तत्त्वदर्शी महात्मा की सेवा में उपस्थित होकर सच्चे धर्म की जिज्ञासा करने लगा। उस महात्मा ने जिज्ञासु से कहा,सत्य वह है जिस पर सबकी एक साक्षी हो, जिसके सब कर्मों को सब मत-वादी स्वीकार करें, वही सच्चा धर्म है। उसी को मानो। किसी एक मत के आडम्बर में न फंसो। जिस धर्म में एक परमेश्वर पर विश्वास और उसकी उपासना, जैसा भाव और ज्ञान भीतर हो, उसी को वाणी द्वारा प्रकाश करना और उसी के अनुसार आचरण करना, जितेन्द्रिय रहना, किसी के अधिकार और वस्तु को न छीनना और निर्बलों व दीनों पर दया करना बताया जाता है, वही धर्म सर्वोत्तम है। ऐसा धर्म केवल वैदिक धर्म ही है और यही धर्म कल्याणकारी एवं मोक्षदाता है।

२) वेदों की पुनः स्थापना– एक दिन लक्ष्मण शास्त्री स्वामी जी के पास जाकर शास्त्रार्थ करने लगे। शास्त्रार्थ का विषय मूर्ति पूजन था। स्वामी जी ने शास्त्री जी को कहा कि अपने पक्ष के पोषण

www.thearyasamaj.org

में आप कोई वेद का प्रमाण उपस्थित कीजिए । शास्त्री महाशय ने कहा कि वेद का प्रमाण कहां से दूं ? वेद तो शंखासुर ने हरण कर लिए है, स्वामी जी ने तत्काल वेद हाथ में उठाकर कहा, पण्डित जी आपके आलस्य और प्रमाद रूपी शंखासुर का वध करके ये वेद मैंने जर्मनी से मँगाये हैं । लीजिए इनमें से खोजकर कोई प्रमाण निकालिए । उस समय सारी सभा हास्य रस में लोट-पोट हो गई । पण्डित जी ने भी मौन साधन ही अच्छा समझा ।'

३) निर्भीक संन्यासी :– महर्षि जी एक निर्भीक संन्यासी थे । कितना भी बड़ा मनुष्य, कोई क्यों न हो, यदि वह कोई दबाब की बात कह बैठता तो स्वामी जी तुरन्त करारा उत्तर देकर, उसका मुंह बन्द कर देते । एक दिन डिप्टी कलेक्टर, अलीजान महाशय उस मार्ग से निकले जहाँ स्वामी जीं व्याख्यान दिया करते थे । डिप्टी महाशय ने कहा कि पण्डित जी ! अपने व्याख्यान में कुछ सम्भलकर बोला कीजिए । स्वामी जी ने तत्काल उत्तर दिया कि कोई भय की बात नहीं है, अब राज्य अंग्रेजी है, औरङ्गजेबी नहीं ।

४) मितव्ययिता के प्रबल समर्थक :– स्वामी जी को मितव्यतियता का भी सदा ध्यान रहता था। वे व्यर्थ व्यय के बड़े विरोधी थे । धन के सदुपयोग की सब को शिक्षा दिया करते थे । स्वामी जी को व्याख्यान-स्थान पर पहुँचाने के लिये जो सज्जन गाड़ी भेजा करता था, वह एक दिन अपनी गाड़ी न भेज सका । किराये की गाड़ी स्वामी जी के निवास स्थान पर आ गई । स्वामी जी ने उस गाड़ी को देख कर कहा ''आप किराए की गाड़ी क्यों लाये हैं ? मुझे गाड़ी में बैठने का कोई व्यसन नहीं है । आने-जाने में अधिक समय न व्यय हो जाए इसलिए मैं गाड़ी में बैठता हूँ, वैसे तो मुझे पैरों चलने ही में आनन्द आता है ।''

पण्डित भीमसेन जी एक दिन बाजार से भोजन-सामग्री ले लाए । स्वामी जी ने भोज्य-पदार्थों का निरीक्षण कर पण्डित जी को कहा, 'आटे आदि के दाम आप से अधिक लिया गया है । ऐसा जान पड़ता है कि आपने भावों की पूछ-ताछ कुछ भी नहीं की । पदार्थ भी उत्तम कोटि के नहीं है । भाई, धन एक उपयोग की वस्तु है । यह बड़े परिश्रम से प्राप्त होता है, इसलिये एक पैसे के व्यय में भी सावधानी रहना चाहिए ।'

५) समय को एक बहुमूल्य वस्तु मानते थे :–स्वामी जी समय को एक बहुमूल्य वस्तु मानते थे। वे दिन रात के सारे पल अपने लिये तो नियम के तार में पिरो ही रखते थे, परन्तु कर्मचारियों को भी व्यर्थ में समय बिताने नहीं देते थे । एक दिन उनके लेखक कार्य करने के लिए समय पर समुद्यत न हो सके । वे कोई आधा घण्टा देर करके काम पर आये । स्वामी जी ने उन्हें उपदेश देते हुए कहा हमारे देश के लोग समय का महत्व नहीं जानते । नियम-बद्ध कार्य करना इनके लिए दुष्कर कर्म है । प्रातः से सायं पर्यन्त, इनके सारे काम अनियमित होते हैं । समय का व्यर्थ खोना इनकी अस्त-व्यस्त अवस्था का एक भारी कारण है ।

समय कितना मूल्यवान् हैं, इसका ज्ञान उस समय होता है, जब किसी का मरणासन्न प्रिय बन्धु शय्या पर पड़ा होता है और वैद्य आकर कहता है कि यदि पाँच पल पहले मुझे बुलाया होता तो मैं

www.thearyasamaj.org

इसे मरने न देता । चाहे सहस्त्रों रूपये व्यय कर डालो, पर अब इसकी आँख नहीं खुल सकती ।'

६) गो रक्षा होना बहुत जरूरी है–स्वामी जी कुछ दिन शाहजहांपुर ठहरकर, लखनऊ होते हुए आश्विन, सुदी १० सं० १९३६ को फर्रूखावाद पधारे । इस बार स्वामी जी ने लाला कालिचरण के उद्यान में आसन लगाया । स्वामी जी यहाँ प्रतिदिन भाषण देते और संहस्त्रों मनुष्य सुनने आते । कलेक्टर आदि राजकर्मचारी भी सम्मिलित हुआ करते और अत्यन्त प्रसन्न होते । उनके भाषणों का प्रभाव वर्णनातीत होता था । एक भाषण में गो रक्षा के लाभ वर्णन करते हुए स्वामी जी ने कहा, 'गो-हत्या से इतनी हानि हो रही है, परन्तु खेद है कि राजपुरूष इस पर कुछ भी ध्यान नहीं देते । यह दोष अधिक हमारा अपना है । हम में एकता का सर्वथा अभाव है । यदि मिलकर गो-वध बन्द कराने का निवेदन करें, तो क्या नहीं हो सकता ? जो लोग गो-दान करते हैं वे भी हानि-लाभ को नहीं सोचते । भोले-भाले भाई समझ लेते हैं कि गो-संकल्प करने से ही बैतरणी पार हो जायेंगे । वे तरना मान लेते हैं और गो पुरोहित देवता के आंगन में खूंटे से बन्धी रहती है । बहुत से ऐसे भी कुल कपूत हैं जो तुरन्त उसे कसाई के हाथ वेच डालते हैं । '

७) दान समीपस्थ को पहले देना चाहिए :—एक दिन, दानपर बोलते हुए स्वामी जी कहा, अन्न-जल का दान कोई भी भूखा-प्यासा मिले उसे दे देना चाहिए । ऐसा दान पहले अपने दीन-दुःखी पड़ोसी को देना चाहिए । पास के रहने वाले का दरिद्र दूर करने में सच्ची अनुकम्पा और उदारता का प्रकाश होता है । इससे वाह-वाह नहीं मिलती, इसलिये अभिमान को भी अवकाश नहीं मिलता ।

८) खण्डन क्यों करता हूं—स्वामी जी ने एक दिन वर्णन किया ''अनेक जन कहते हैं कि आपके खण्डन-परक व्याख्यानों से तो लोगों को घबराहट उत्पन्न हो जाती है । उनके हृदय भड़क उठते हैं, इसका परिणाम शुभ कैसे होगा । भाई जब रोग दूर होने में नहीं आया करता तो अच्छे वैद्य लोग देर के बढ़े दोषों को शान्त करने और मल को बाहर निकालने के लिए विरेचक औषधियां दिया करते हैं। विरेचक औषधि पहले पहल घबराहट उत्पन्न करती है । व्याकुलता लाती है । कभी-कभी उससे मुंह भी मचलाने लग जाता है । परन्तु जब विरेचन होकर कुपित दोष शान्त हो जाते हैं, तब प्रसन्नता होती है धीरे-धीरे वास्तविक पुष्टि प्राप्त हो जाती है । आर्य जाति में अनेक कुरीतियों के दोष और मिथ्या मन्तव्यों के मत बढ़ गये हैं । उनके कारण यह इतनी रुग्ण हो गई है कि इसकी आयु को उङ्गलियों पर गिनने लगे हैं ।''

हमारे उपदेश, आज विरेचक औषध की भाँति, घबराहट अवश्य लाते हैं पर है वे जातीय शरीर में संशोधन और अरोग्य प्रद होते हैं । वर्तमान आर्य सन्तान हमें चाहे जो कहे परन्तु भारत की भावी सन्तति हमारे धर्म सुधार को और हमारे जातीय संस्कार को अवश्यमेव महत्व की दृष्टि से देखेगी । हम लोगों की आत्मिक और मानसिक नीरोगता के लिए जो कुरीतियों का खण्डन करते हैं, यह सब कुछ हित-भावना से किया जाता है ।

गोविन्दराम आर्य एण्ड सन्स, १८० महात्मा गान्धी रोड (दो तल्ला) कलकत्ता ७००००७
दूरभाष : २२१८३८२५ आफिस, २६७५८९०३ घर

www.thearyasamaj.org

आयु और मृत्यु विज्ञान

—श्री हरिश्चन्द्र वर्मा 'वैदिक'

जब तक आयु है तब तक प्राण है, जब तक प्राण है तब तक स्वांस चलता है और जब तक स्वांस चलता है तब तक इस शरीर में जीवन अर्थात् आत्मा विद्यमान है ।

वेद भी कहता है-

'इमाम गृम्णान् रसनामृतस्य पूर्वऽ आयुषि विदभेषुकव्या ।
सानोऽअस्मिन्त्सुतऽआबभूवऽऋतस्य सामन्त्सरमारपत्नी ।।'

(यजुर्वेद द्वाविंशोऽध्याय)

भावार्थ—जैसे डोर से बंधे हुए प्राणी इधर उधर भाग नहीं सकते वैसे युक्ति के साथ धारण की हुई आयु ठीक समय के बिना नहीं भाग जाती ।।

किन्तु शरीर के किसी मौलिक तत्वों के अभाव अथवा कोषाणु के बिगड़ जाने से जब रोगी का शरीर रोग से अति क्षीण हो जाता है तब मृत्यु की सम्भावना बढ़ जाती है । मृत्यु के समय नाड़ी की गति तीव्र अथवा शिथिल होने लगती है । उस अवस्था में उसका सबसे नाता छूट जाता है, वह बेवश हो जाता है । उसका कष्ट बढ़ जाता है, कष्ट की मात्रा हृदय से मस्तिष्क तक पहुँच जाती है, उस अवस्था में मनुष्य अज्ञान हो जाता है । यह मृत्यु का कष्ट अन्तिम चोट होता है इस अन्तिम समय में कोई होश में नहीं रहता, फिर भी रोगी का शरीर यदि मृत जैसा हो गया है और यदि शरीर के किसी भी स्थान में नाड़ी सक्रिय है तो उसे मृत समझा जाने वाला, वास्तव में वह जीवित है, ईश्वर की कृपा और डाक्टर के प्रयत्न से उसे पुनः जीवित किया जा सकता है । पर मरने वाले की इन्द्रियों के गुण जब मन में, मन प्राण में, और प्राण आत्मा में लीन अर्थात् समाहित हो जाता है—तब जैसे कच्छप अपने सब अंगों को समेट लेता है वैसे ही जीवात्मा अपनी शक्तियों को समेट लेता है और तब उसका सुनना, बोलना, देखना और सोचना बन्द हो जाता है । (मुझे अपने पिताजी की मृत्यु देखकर आश्चर्य हो गया था, जब उनका हृदय का दौरा प्रारम्भ हुआ तो उनकी बेचैनी बहुत बढ़ गई, ऐसा लगा उनके शरीर में खलबली मच गई और उसी अवस्था में तीन बार राम और मेरे तरफ देखकर तीनबार ओम् का नाम बोले और शांत हो गये कम्बल बिछाने के लिये कहे और सो गये । ४ बजे प्रातः डाक्टर आये, शरीर निष्प्राण हो गया था । धीरे-धीरे ठण्डा हो गया । उस समय मुझे ऐसा लगा कि एक पर्दा गिर गया, जो था वह नहीं रहा । इस प्रकार की मृत्यु मैंने नहीं देखी थी । पिताजी का नाम प्रभुराम वर्मा था, उनका देहान्त ७५ वर्ष की आयु में, ब्रह्ममुहूर्त ३.३० से ४ बजे के अन्दर दिनांक बुधवार, दिसम्बर सन् १९८५ ई० को हुआ था ।)

हमारे आचार्य जी का कहना है कि ''शरीर स्थूल और सूक्ष्म दो प्रकार का है, तीसरा कारण शरीर है (कारण शरीर सदैव आत्मा के साथ जुड़ा रहता है । वह भी जीव की तरह अविनाशी है ।

www.thearyasamaj.org

ऋषि के शब्दों में वह कारण रूप प्रकृति होने से सर्वत्र विभु और सब जीवों के लिये एक है) इन तीनों शरीर में व्याप्त पंचकोश है । मृत्यु होने की स्थिति तब है, जब सूक्ष्म शरीर इस देह से निकल जाता है और पंच कोशों की स्थिति बिगड़ जाती है । देह के जर्जरित हो जाने पर या क्षतविक्षत हो जाने पर भी यदि प्राणमय कोश कार्य कर रहा है तो मृत्यु नहीं होगी । यदि प्राणमय कोश भी काम करना बन्द कर दे और मनोमय कोश अपना स्वस्थ एवं कार्य करता रहे तो शरीर व प्राण के न होने पर भी शरीर जीवित रह सकता है चाहे उस देह को कोई मृत समझ लें, यह समझी भूल हो सकती है । इसी प्रकार शरीर, प्राण और मनोमय कोशों के कार्य स्थगन होने पर यदि आनन्द मय कोश उस शरीर में रहकर क्रियाशील रहे तो शरीर निश्चेष्ट मृतवत प्राणस्पन्दन रहित संज्ञा शून्य रहते हुए भी वास्तव में जीवित है और उसमें प्रयत्न करने पर मन प्राण की क्रिया पुनः चालू कर देने से शरीर कार्य करने लगता है । अर्थात् आत्मा जब तक किसी भी कोश में स्थित होकर इस शरीर में रहेगा तब तक मृत सदृश समझा जाने वाला शरीर पुनः मन, प्राण आदि को प्राप्त कर सकता है । यजुर्वेद में मंत्र आता है–

'पुर्नमनः पुनरायुर्म आगन् पुनः प्राणः पुनरात्मामअगत् पुनश्चक्षुः पुनः श्रोत्रं म आगत....अ.४, १५।'

अर्थात् मुझे पुनः मन, आयु, प्राण, आत्मा, चक्षु और श्रोत्रादि प्राप्त हो । यह कार्य वैश्वानर अग्नि के कारण तथा शरीर के कोशों की स्थिति ठीक होने पर ही होगा ।

हमारे ऋषियों ने इस शरीर में मुख्य पंचकोसों का वर्णन किया है किन्तु उनसे सम्बन्धित अनेक कोशिकायें हैं । ज्ञानचन्द्र लिखते हैं कि–''देह के निर्माण की सर्वप्रथम एवं लघुतम इकाई है । कोष या कोशिकायें एक वयस्क मानव देह में सौ ट्रिलियन अर्थात् दशनील कोशिकायें होती हैं । इन्हीं कोशिकाओं में मानव के स्वभाव, प्रकार, आकार व विकास के गुणसूत्र कूटीकृत रहते हैं । ये कोशिकायें परिवर्तित, परिवर्धित एवं रूपान्तरित होती रहती हैं परन्तु मरती नहीं । इनका मूल तत्व अभौतिक है । सूक्ष्म जगत् एवं स्थूल जगत् के मध्य में सेतु के समान स्थित कोशिकायें ही 'जीवन और मृत्यु का कारण बनती है । मृत्यु बोध और मृत्यु भय अथवा तीव्र वेदना की स्थिति में ये जड़ीभूत हो जाती हैं अतएव चैतन्य एवं प्राण का वहन नहीं कर सकती । ब्रह्म जो मूल चैतन्य का स्वाभाविक कारण और उद्गम है, पूरी तरह मृत्यु अभाव व नकार से रहित है । जैसे सूर्य और अन्धकार कभी साथ नहीं रह सकते वैसे ही ब्रह्म और मृत्यु कभी साथ हों, यह प्रश्न ही स्वविरुद्ध है । विशिष्ट साधनाओं, प्रक्रियाओं और प्रार्थनाओं के द्वारा देह कोशिकाओं के अज्ञान, अविवेक एवं मनों के आवरण को दूर करके उन्हें ब्रह्म भावापन बनाकर आयु को दीर्घ, अतिदीर्घ और अत्मन्ताति दीर्घ किया जा सकता है ।''

मृत्यु के लक्षण

जीवन की स्थिति स्तोम से है । ध्वनि, नियमित ध्वनि जीवन का चिन्ह है । यदि शरीर में ध्वनि या कंपन अर्थात् नाड़ी न रहे तो वह मृत है (यन्त्र की सहायता से भी उन दोनों का अनुभव न हो तो वह मृत है ।) अरिष्टों से अर्थात् उल्टे चिन्हों से जो मृत्यु को बतलाते है, उनसे अपनी मृत्यु का ज्ञान हो जाता है । अरिष्ट तीन प्रकार के हैं–(१) कानो को बन्द करने पर अन्दर की ध्वनि का न सुनाई देना अथवा आखों को हाथों से दबाने पर भी ज्योति के कणों का न दिखलाई देना ।

www.thearyasamaj.org

(२) नाड़ी की गति तीव्र हो जाना और हृदय की गति बन्द होकर पुनः चालू हो जाना ।

(३) मरे हुए पुरुषों का इस प्रकार दिखलाई देना मानो सामने खड़े हैं ।

इस प्रकार इन अरिष्टों के चिन्हों द्वारा साधारण मनुष्यों को भी मृत्यु का ज्ञान हो जाता । परन्तु जिन्हें हाईप्रेसर और हृदय आदि की असाध्य बीमारी है उन्हें प्रतिदन प्रातः सूर्य किरण का दर्शन करना चाहिये । लम्बी यात्रा के पूर्व भी उन किरणों का दर्शन कर लेना चाहिये । इस विषय में महात्मा आनन्द स्वामी जी 'उपनिषदों का संदेश में जो लिखे हैं उसे पढ़ने से मृत्यु का शोफ दूर हो जाता है—'पहली बात यह है कि मृत्यु जब निकट आ रही हो तब उपनिषद के ऋषि के अनुसार मनुष्य यदि सूर्य को देखे तो सूर्य दिखाई अवश्य देता है, परन्तु उससे निकलने वाली रंगारंग की किरणें दिखाई नहीं देती, अतः प्रतिदिन सूर्य को देखो । यदि सूर्य की किरणें दिखाई दें तो ठीक परन्तु यदि किसी दिन दिखाई न दे तो समझो कि ओम तत् सत' होने वाला है ।

कई डाक्टर महोदय भी यहां बैठे होंगे । उनसे भी मैं कहता हूँ, कोई रोगी आये तो उससे कहें सूर्य को देखे यदि उसे किरणें दिखाई नहीं देती तो फिर-भले नाड़ी ठीक प्रकार चलती हो, हृदय की धड़कन ठीक हो, रक्तचाप सम हो वह व्यक्ति मरेगा अवश्य । हमारे ऋषियों की बात कभी झूठी नहीं होती ।''

मृत्यु और जन्म–जितने प्राणियों की मृत्यु होती है वे सब प्राण को प्राप्त हो जाते हैं क्योंकि वे जिस प्राणवायु के सहारे जीते हैं, उसी यम नाम वायु के प्राणतत्व में मिल जाते हैं, पुनः प्राण और आत्मा के माध्यम से प्राणियों का गर्भ में पुनर्जन्म होता है । यह नियम जैसे दिन के पीछे रात और रात के पीछे दिन का कारण सूर्य होता है उसी प्रकार मृत्यु के पीछे जन्म और जन्म के पीछे मृत्यु का कारण आत्मा होता है । जन्म और मृत्यु का उदाहरण जागृत, स्वप्न और सुषुप्ति द्वारा प्राणियों को दैनिक प्राप्त हो रहा है । जैसे सुषुप्ति अवस्था मृत्यु का प्रतीक है वैसे ही जागृतावस्था जन्म का चिन्ह है । भेद केवल इतना है कि सुषुप्ति निद्रा के पश्चात् जागृतावस्था में उसे उसका पूर्व का ज्ञान लुप्त नहीं होता, किन्तु पुर्नजन्म में पूर्व जैसे मस्तिष्क के स्नायु गठन में किंचित परिवर्तन हो जाने से उसको अगले जन्म का बोध नहीं होता । उदाहरण के लिये मस्तिष्क के किसी ऐसे स्थान में चोट लग जाने से जैसे उस व्यक्ति को वर्तमान अपने माता, पिता, स्त्री, पुत्रादि को नहीं पहचानता । वैसे ही मृत्यु कष्ट की घटना से उसका स्मरण स्वभाव आदि सब बदल जाता है ।

जब रोगादि से शरीर अतिक्षीण हो जाता है तब आत्मा पूर्व शरीर को छोड़ने के पश्चात् गर्भ में उसके द्वारा संस्कार के अनुसार नये शरीर एवं मस्तिष्क का निर्माण होने लगता है और जब जन्म लेकर दुनियाँ में आता है तब शिशु की आत्मा में पूर्व का संस्कार तो होता ही है पर पहले जैसा स्वभाव और मस्तिष्क के स्नायुओं का गठन सबल न होने से शिशु अवस्था में वाणी द्वारा बोलने में असमर्थ होता है । उसके आत्मा में ज्ञातृत्वगुण अवश्य रहता है, उदाहरण के लिए एक दो मास का शिशु जब निद्रावस्था में होता है तब वह हँसने और रोने जैसा हरकत करता है जिसे देखकर यह सिद्ध होता है कि उस अवस्था में उसे पूर्व जन्म का सुख दुःखादि का आभास अवश्य होता है ।

www.thearyasamaj.org

'प्रश्नोपनिषद' के ऋषि कहते हैं कि—"**अत्रैषदैव: स्वप्ने महिमानमनु भवति । यद् दृष्टं दृष्ट मनुपश्यति श्रुतं श्रुतमेवार्थ मनु श्रृणोति देशदिगन्तरैश्च प्रत्यनुभूतं पुन: पुन: प्रत्यनु भवति दृष्टं चा श्रुवँचा श्रुतँचानु भूतं चातु भूतँ च सच्च सर्वं पश्यति सर्व: पश्यति** ॥४६॥"

व्याख्या—मन इस स्वप्न अवस्था में अपनी महिमा को अनुभव करता है अथवा देखे सुने और देश देशान्तर में अनुभव किये हुए को फिर स्वप्न के रूप में देखता सुनता और अनुभव करता है, न सिर्फ देखे सुने और अनुभव किये हुए बल्कि इस जन्म में न देखे न सुने और न अनुभव किये हुए परन्तु पिछले जन्मों में देखे सुने और अनुभव किये हुए को फिर फिर देखता, सुनता और अनुभव करता है।

इसी प्रकार जो विद्यमान है और जो इस समय या इस जन्म में विद्यमान नहीं, उन्हें भी देखता है। इस वाक्य में यह बात बताई गई है कि स्वप्न में मनुष्य क्या देखता है अर्थात् वह जो कुछ देखता सुनता आदि है वह या तो इस जन्म का देखा, सुना और अनुभव किया हुआ होता है या पिछले जन्मों का देखा, सुना और अनुभव किया हुआ होता है जो स्मृति आदि के रूप में चित्त में अंकित रहता है। कोई ऐसी बात नहीं देखता जिसका इस जन्म या पिछले जन्मों के उपार्जित ज्ञान से सम्बन्ध न हो। पिछले जन्मों में देखी सुनी आदि बातों अदृष्ट और अश्रुतः, वर्तमान स्थूल शरीर की इन्द्रियों की अपेक्षा से, कहा गया है अर्थात् इन आंखों और कानों से न देखे न सुने हुए होने कारण वे अदृश्य और अश्रुत है।

इससे सिद्ध होता है कि शिशु को स्वप्नावस्था में उसे उसको पूर्व जन्म का सुख, दुःखादि घटनाओं का आभास अवश्य होता है। परन्तु ईश्वरीय नियम ऐसा है कि वह जैसे जैसे बड़ा होता है वैसे वैसे उसके पूर्वजन्म के स्मृति पर पर्दा पड़ने लगता है और बड़े होने पर वह बिल्कुल भूल जाता है। जैसे पुत्र का माता के प्रति ममत्व, माता के देहान्त के साथ चला जाता है वैसे ही उसका भी पूर्व का ज्ञान लुप्त हो जाता है। यदि ईश्वरीय नियम मन को चंचलता एवं उसके परिवर्तन को स्वाभाविक न बनाता तो मानव पागल जैसा हो जाता। यदि पूर्व जन्म का ज्ञान सबको होने लगता तो मानव दुःखों से पीड़ित हो जाता। आज का विज्ञान और कोर्ट अदालत पुर्नजन्म की घटनाओं को सही और साक्षी नहीं मानता, पर कोर्ट अदालत में गीता, कुरान,बाईबिल पर हाथ रखवाकर शपथ कराया जाता है, कि मैं जो कुछ बोलूँगा सत्य बोलूँगा सत्य के अलावा झूठ नहीं बोलूँगा। जबकि गीता अध्याय २ में पुनर्जन्म की बाते लिखी हुई है और अध्याय ४ में "**बहूनि में व्यतीतानिजन्मानितरचार्जुन। तात्यहंवेद सवाणिनत्वंवेत्थ परंतप ॥** हे अर्जुन मेरे और तेरे बहुत से जन्म हो चुके हैं, परन्तु ! उन सबको तू नहीं जानता और मैं जानता हूँ।"

ग्रु० पो० मुरारई, जिला बीरभूम ,(पं० बंगाल)

www.thearyasamaj.org

बाल सत्संग : सोमवार २३ दिसम्बर २०१२ को अपराह्न ३ बजे से ६ बजे तक बाल सत्संग के बच्चों द्वारा बहुत ही रोचक कार्यक्रम प्रस्तुत किया गया। जिसमें चित्रांकन प्रतियोगिता, वेद मन्त्र पाठ, आर्य समाज के नियमों का पाठ, यज्ञ का प्रस्तुतीकरण एवं भजन बच्चों द्वारा प्रस्तुत किया गया। प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय स्थान प्राप्त करने वाले बच्चों को पुरस्कृत किया गया तथा अन्य बच्चों को सान्त्वना पुरस्कार दिये गये। पुरस्कार श्रीमती सुषमा अग्रवाल जी के सौजन्य से प्रदान किया गया। कार्यक्रम को सफल बनाने में श्री सुरेश अग्रवाल, श्री सतीश जायसवाल, श्री कृष्णकुमार जायसवाल एवं श्री सुदेश जायसवाल तथा आर्य स्त्री समाज कलकत्ता की सदस्याओं का विशेष योगदान रहा।

स्वामी श्रद्धानन्द बलिदान दिवस : २३ दिसम्बर २०१२ को सायं ६ बजे से ९.३० बजे तक श्रद्धानन्द बलिदान दिवस पूर्व प्रधान श्री श्रीराम आर्यजी की अध्यक्षता एवं पूर्व प्रधान श्री राजेन्द्र प्रसाद जायसवाल जी के संयोजकत्व में मनाया गया। वक्ताओं ने स्वामी श्रद्धानन्द जी के मुख्य योगदान शिक्षा, शुद्धि एवं दलितोद्धार पर विशेषरूप से प्रकाश डाला।

राष्ट्र रक्षा सम्मेलन : २५ दिसम्बर २०१२ को सायं ६ बजे से ९.३० बजे तक आर्य जगत् के प्रसिद्ध विद्वान डा० राजेन्द्र विद्यालंकार जी की अध्यक्षता में मनाया गया। संयोजक थे आर्य समाज कलकत्ता के प्रधान श्री मनीराम आर्य। वक्तागण के रूप में— प्रो० राजेन्द्र जिज्ञासु, डा० सुरेन्द्र कुमार, डा० ऋचायोगमयी प्रभृति विद्वान् थे।

महिला सम्मेलन :—महिला सम्मेलन आर्य स्त्री समाज कलकत्ता द्वारा २६ दिसम्बर को अपराह्न २.३० बजे से ६ बजे तक डा० ऋचा योगमयी जी की अध्यक्षता में मनाया गया। पं० नचिकेता भट्टाचार्य जी के कुशल निर्देशन में आर्य स्त्री समाज कलकत्ता की सदस्याओं द्वारा, वेद पाठ, भजन, व्याख्यान प्रस्तुत किया गया। श्रीमती सुशीला दम्माणी एवं श्रीमती सन्तोष गोयलजी ने वक्तव्य प्रस्तुत किया। इस अवसर पर आर्य स्त्री समाज कलकत्ता की सदस्या श्रीमती सरस्वती देवी आर्या जी का सार्वजनिक अभिनन्दन किया गया। माला, शाल एवं चन्दन द्वारा उनका स्वागत किया गया।

अभिनन्दन समारोह : दिनांक २७ दिसम्बर को सायंकालीन सत्र में ६ बजे से ७ बजे तक आर्य समाज कलकत्ता के कर्मठ कार्यकर्ता एवं यज्ञप्रेमी श्री शीतल प्रसाद आर्य जी का आर्य समाज कलकत्ता द्वारा सार्वजनिक अभिनन्दन किया गया। वक्ताओं ने श्री शीतल प्रसाद आर्य के संघर्षमय जीवन एवं आर्य समाज के प्रति उनके अनुराग की सराहना की। इस अवसर पर उनको आर्य समाज कलकत्ता के प्रधान, मन्त्री एवं स्त्री आर्य समाज द्वारा, शाल, चन्दन, माला एवं मानदेय द्वारा स्वागत तथा अभिनन्दन पत्र भेंट किया गया। विभिन्न आर्य समाज के अधिकारियों एवं आर्य संस्थाओं द्वारा माल्यार्पण द्वारा स्वागत किया गया।

वेद सम्मेलन : २८ दिसम्बर २०१२ को सायं ६ बजे से ९.३० बजे तक डा० सुरेन्द्र कुमार जी की अध्यक्षता में वेद सम्मेलन सम्पन्न हुआ। वक्ताओं में प्रो० राजेन्द्र जिज्ञासु, डा० राजेन्द्र विद्यालंकार, डा० ऋचा योगमयी तथा कलकत्ता विश्वविद्यालय में संस्कृत विभाग में वेद विषय की

www.thearyasamaj.org

प्राध्यापिका डा० मोउ दासगुप्ता थी । कार्यक्रम के संयोजक श्री योगेशराज उपाध्याय जी थे।

शंका समाधान : दिनांक २९ दिसम्बर को सायं ६.३० से ७.३० बजे तक शंका समाधान का कार्यक्रम था । समाधान कर्ता—प्रो० राजेन्द्र जिज्ञासु, डा० सुरेन्द्र कुमार एवं देवनारायण तिवारी थे ।

आर्य संस्कृति सम्मेलन : प्रो० राजेन्द्र जिज्ञासु जी के अध्यक्षता में ३० दिसम्बर २०१२ को प्रातः १० बजे से १ बजे तक आर्य संस्कृति सम्मेलन का आयोजन किया गया । कार्यक्रम के संयोजक श्री घनश्याम मौर्य थे । वक्तागण थे—डा० सुरेन्द्र कुमार, डा० राजेन्द्र विद्यालंकार, श्री दिनेश दत्त आर्य आदि ।

कवि सम्मेलन : ३० दिसम्बर २०१२ सायं ६ बजे से ९.३० बजे तक सुप्रसिद्ध साहित्यकार एवं वरिष्ठ कवि डा० अरुण प्रकाश अवस्थी जी की अध्यक्षता में कवि सम्मेलन आयोजित हुआ । मुख्य अतिथि थे सुरेन्द्रनाथ कालेज में हिन्दी विभागाध्यक्ष डा० प्रेम शंकर त्रिपाठी, दीप प्रज्जवलित कर सम्मेलन को उद्घाटित किया प० बंगाल के पूर्व पुलिस महानिदेशक श्री दिनेश चन्द्र बाजपेयी । अन्य कविगण जिन्होंने अपनी रचनाओं से श्रोताओं का ध्यान आकृष्ट किया, श्री योगेन्द्र शुक्ल 'सुमन', डा० गिरघर राय, डा० एस० आनन्द, श्री जगेश तिवारी । कार्यक्रम का संयोजक किया श्री नन्द लाल सेठ जी रौशन ने ।

ऋषि लंगर : ३० दिसम्बर २०१२ दिन रविवार को अपराह्न १ बजे से ऋषि लंकर में उपस्थित समस्त स्त्री, पुरुष एवं बच्चों ने भाग लिया ।

वैदिक साहित्य का लोकार्पण : आचार्य पं० उमाकान्त उपाध्याय द्वारा लिखित पुस्तक 'मातृभूमि वैभवम्' का लोकार्पण २८ दिसम्बर २०१२ को वेद सम्मेलन के अवसर पर प्रो० राजेन्द्र जिज्ञासु जी के कर कमलों द्वारा किया गया । 'मातृभूमि वैभवम्' अर्थववेद के पृथ्वी सूक्त की व्याख्या है जिसमें राष्ट्र की अवधारणा एवं जिन गुणों की द्वारा राष्ट्र समुन्नत होता है इसका विशेष वर्णन है ।

प्रो० राजेन्द्र जिज्ञासु जी द्वारा लिखित पुस्तक वेद क्यों और क्या ? तथा प्रो० उमाकान्त उपाध्याय जी द्वारा लिखित पुस्तक श्राद्ध और तर्पण का बंगला भाषा में अनुवाद किया है पं० वासुदेव शास्त्री (जयपुर) ने इन दोनों पुस्तकों का विमोचन डा० सुरेन्द्र कुमार एवं प्रो० राजेन्द्र जिज्ञासु जी द्वारा वेद सम्मेलन के अवसर पर किया गया । २९ दिसम्बर २०१२ को सायंकालीन सत्र में अमर स्वामी प्रकाशन द्वारा प्रकाशित पुस्तक महर्षि दयानन्द का दार्शनिक चिन्तन लेखक डा० रमेश दत्त मिश्र का लोकार्पण प्रो० राजेन्द्र जिज्ञासु जी द्वारा किया गया । इसके अतिरिक्त बहन प्रेमलता अग्रवाल मुम्बई एवं अमर स्वामी प्रकाशन विभाग द्वारा १८ भाषाओं में सत्यार्थ प्रकाश एक डी.वी. डी. में एक महर्षि दयानन्द के समस्त ग्रन्थ एवं डी. वी. डी. में का लोकार्पण भी प्रो० राजेन्द्र जिज्ञासु जी द्वारा किया गया।

सत्यप्रकाश जायसवाल,

आर्य समाज कलकत्ता, १९ विधान सरणी कोलकाता - ६ के लिए पं० उमाकान्त उपाध्याय, एम०ए० द्वारा प्रकाशित तथा एशोशियेटेड आर्ट प्रिण्टर्स, ७/२, विडन रो, कोलकाता-६ में मुद्रित । मो. : ९८३०३७०४६३